ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 30 जुलाई 2017 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार, 30 जुलाई 2017 से 05 अगस्त 2017

श्रा. शु. – 07 ● वि० सं०–2074 ● वर्ष 58, अंक 82, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 193 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,117 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

आर आर बावा डी.ए.वी. कॉलेज, बटाला ने मनाया 52वाँ स्थापना दिवस

आर आर बावा डी.ए.वी. कॉलेज फॉर गर्ल्ज़, बटाला में कॉलेज के स्थापना दिवस पर यज्ञ का आयोजन किया गया जिसकी अध्यक्षता श्री बी.के. मित्तल (सचिव, डी.ए.वी. कॉलेज प्रबन्धकर्त्री समिति, नई दिल्ली) ने की।

सर्वप्रथम नवीन सत्र के आरम्भ में यज्ञ किया गया तथा ईश्वर से एक श्रेष्ठ सत्र के लिए कामना की गई। डॉ. कल्पना शर्मा ने कॉलेज के स्थापना दिवस के सन्दर्भ में कॉलेज के आरम्भ से निरन्तर अग्रसर होती प्रगति का संक्षिप्त ब्यौरा दिया। उन्होंने बताया कि सन् 1965 में महाशय गोकुल चंद जी तथा सोहन लाल जी बावा के प्रयासों से 7 छात्राओं तथा 8 प्राध्यापिकाओं के साथ आरंभ हुआ, यह महाविद्यालय आज 52 वर्षों के बाद 2000 से अधिक छात्राओं एवं 80 प्राध्यापकों से युक्त 'ए' ग्रेड तथा सी पी ई स्टेटस वाला इस क्षेत्र का प्रतिष्ठित कॉलेज है।

मुख्यातिथि श्री बी.के. मित्तल जी ने कॉलेज की उन्नति एवं प्रगति पर संतोष व्यक्त किया। उन्होंने कॉलेज के बहुमुखी विकास पर प्राचार्या एवं स्टाफ को बधाई दी। कॉलेज के चेयरमैन श्री सतपाल मरवाहा जी ने छात्राओं को आशीर्वाद देते हुए कॉलेज की निरन्तर प्रगति के लिए प्राचार्या को बधाई दी। इस अवसर पर श्री राजेश कवात्रा जी ने कॉलेज की स्थापना में भागीदार नगर की प्रमुख शख्सियतों का नाम लेते हुए उनके योगदान की चर्चा की। सभी अतिथियों का स्वागत करते हुए प्राचार्या डॉ. (श्रीमती) नीरु चड्डा ने कॉलेज के सर्वांगीण विकास की चर्चा की। उन्होंने नव–निर्मित स्वीमिंग पूल, छात्राओं के उत्कृष्ट परिणामों की विस्तृत जानकारी दी।

इस अवसर पर कॉलेज की समाचारिका 'नव्य दृष्टि' का विमोचन भी किया गया।

डी.ए.वी. ककराला में चरित्र निर्माण शिविर का आयोजन

गर्मी की छुट्टियों में डी.ए.वी. पब्लिक सी. सै. स्कूल ककराला में चरित्र निर्माण शिविर व योग भगाए रोग शिविर का आयोजन करवाया गया। इस शिविर में प्रतिदिन दैनिक यज्ञ हुआ जिससे विद्यार्थियों में धार्मिक भावना जागृत करने और हवन से होने वाले लाभों की जानकारी दी गई

शिविर में छात्रों में शिष्टाचार, सद्व्यवहार, सत्य, अहिंसा, सेवा आदि का शिक्षकों द्वारा पाठ पढ़ाया गया। सुबह 8.00 से 9.00 तक दैनिक यज्ञ, प्रार्थना, 9.15 से 10.30 तक व्यायाम 10.45 से 12.00 तक अच्छे आचरण से संबंधित उद्देश्यों पर वार्तालाप 12.00 से 12.30 तक दोपहर का भोजन किया जाता था।

अन्तिम दिन सभी प्रतिभागी छात्रों की प्रतियोगिता करवाई गई। जिसमें छात्रों ने अलग–अलग योग आसनों में प्रथम व द्वितीय स्थान प्राप्त किए। यह शिविर स्कूल के धर्म–शिक्षकों के मार्ग दर्शन में समापन हुआ।

स्कूल के प्राचार्य श्री मनोज शर्मा जी ने शिविर के समापन पर शिक्षकों का धन्यवाद करके सभी शिविर में उपस्थित छात्रों की प्रमाण–पत्र और प्रतियोगिताओं में विजयी छात्रों को आशीर्वाद के रूप में पुरस्कार वितरित किए।

बी.बी.के डी.ए.वी. अमृतसर में नये सत्र के शुभारम्भ पर हुआ यज्ञ का आयोजन

बी.के डी.ए.वी. कॉलेज फॉर विमेन, अमृतसर में डॉ. पूनम सूरी जी (पद्मश्री), प्रधान डी.ए.वी. कॉलेज प्रबंधकर्त्री समिति एवं आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली की प्रेरणा से आर्य युवती सभा द्वारा नव शैक्षणिक सत्र 2017–18 के शुभारम्भ पर यज्ञ का भव्य आयोजन किया गया जिसमें ईश्वर से विश्व–कल्याण, सद्बुद्धि एवं प्रत्येक जन को जीवन में सही दिशा प्रदान करने की प्रार्थनाएँ की गईं।

प्राचार्या डॉ. पुष्पेंदर वालिया ने अपने वक्तव्य में उपस्थिति के समक्ष महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा समाज में चारों वेदों का प्रचार, नारी–उद्धार एवं शिक्षा प्रसार के लिए अविस्मरणीय कार्यो को याद किया और आज भारत में शिक्षा का प्रचार–प्रसार कर रही लगभग 900 डी.ए.वी. संस्थाओं का श्रेय आर्यसमाज एवं डा. पूनम सूरी जी के नेतृत्व में उनकी तपस्या एवं मार्गदर्शन को दिया।

डॉ. वालिया ने महाविद्यालय की छात्राओं द्वारा मई 2017 की अकादमिक

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – पूनम सूरी

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 30 जुलाई 2017 से 05 अगस्त 2017

वाणी के सलिल में स्नान

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

ऋतेन गुप्त ऋतुभिश्च सर्वैः, भूतेन गुप्तो भव्येन चाहम्।
मा मा प्रापत् पाप्मा मौत मृत्युः, अन्तर्दधेऽहं सलिलेन वाचः।।

अथर्व17.1.28

ऋषिः **ब्रह्मा।** देवता **आदित्यः।** छन्दः **त्रिष्टुप्।**

● **(अहं)** मैं **(ऋतेन)** सत्य से **(च)** और **(सर्वैः)** सब **(ऋतुभिः)** ऋतुओं से **(गुप्तः)** रक्षितज **[होऊँ]**, **(भूतेन)** अतीत से **(भव्येन च)** और भविष्यत् से **(गुप्तः)** रक्षित **[होऊँ]**। **(पाम्पा)** पाप **(मा)** मुझे **(मा)** मत **(प्रापत्)** प्राप्त हो, **(मा उत) न ही (मृत्युः)** मृत्यु **[प्राप्त हो]**। **(अहं)** मैं **(वाचः)** वेदवाणी के **(सलिलेन)** सलिल से, ज्ञानामृत से **(अन्तः दधे)** [स्वंय को] आच्छादित कर देता हूँ।

● मैं अ–सुरक्षा के सन्त्रास से व्याप्त इस जगत् में सर्वात्मना रक्षित रहना चाहता हूँ। पर रक्षा का उपाय क्या है? सहस्त्रों सैनिकों को अपने चारों ओर सन्नद्ध करके भी मैं वैसी रक्षा प्राप्त नहीं कर सकता, जैसी स्वयं नैतिक नियमों में बंधकर तथा आत्म–बल को जगाकर पा सकता हूँ। सर्वप्रथम मैं 'सत्य' से रक्षित होऊँ। मनुष्य बहुधा अपनी रक्षा के लिए 'असत्य' का अवलम्बन करता है। वह सोचता है कि असत्य कहकर मैं अपराध के दण्ड से बच जाऊँगा। पर असत्य छिपता नहीं। अपराधी को अपराध का दण्ड तो मिलता ही है, असत्य–भाषण का अतिरिक्त दण्ड भोगना पड़ता है। इसके विपरीत सत्य बोलकर अपना अपराध स्वीकार कर लेने पर वह क्षमा का पात्र हो जाता है। मैं ऋतुओं से भी रक्षित होऊँ। ग्रीष्म, बर्षा, शरद्, हेमन्त, शिशिर, वसन्त, छहों ऋतुएँ व्यवस्थित रूप से आकर प्रकृति के कार्य–कलाप का चारुता के साथ निर्वाह करती हैं। इन ऋतुओं से शिक्षा लेकर मैं भी अपने कार्य को यथासमय करने की आदत डालूँ, तो मैं भी रक्षित रह सकता हूँ। यदि मैं अपने राष्ट्र के उज्ज्वल अतीत से शिक्षा लेकर वर्तमान को उज्ज्वल करने का व्रत लूँ, तो अतीत भी मेरा रक्षक बन सकता है। उज्ज्वल भविष्य की कल्पना करके उसे मूर्तरूप देने के प्रयास द्वारा 'भव्य' को भी मैं अपना रक्षक बना सकता हूँ।

पाप मुझे न प्राप्त हों। यदि मैं दृढ़ता धारण लूँ कि किसी भी अवस्था में पाप के वशीभूत नहीं होऊँगा, तो पाप सदा मुझसे दूर रहेगा। परिणामतः नैतिक दृष्टि से मैं सुरक्षित रहूँगा। मृत्यु भी मुझे न प्राप्त हो। यों तो जिसने जन्म लिया है वह मृत्यु से ग्रस्त होता ही है, किन्तु जब भी चाहे अकाल मृत्यु आकर हमें ग्रस ले तो हम सर्वथा असुरक्षित रहते हैं। अतः सुरक्षा के लिए अकाल मृत्यु से बचना आवश्यक है। अन्त में आत्मरक्षार्थ मैं वाणी के सलिल से, वेदवाणी के ज्ञानामृत से, स्वयं को अच्छादित करता हूँ। जैसे शीतल–पवित्र जल का पान और उसमें स्नान श्रम और सन्ताप को मिटाकर हमारी रक्षा करता है, वैसे ही वेदवाणी के पवित्र ज्ञान–सलिल में स्नान भी हमारे अज्ञान–मूलक दुःख–द्वन्द को हरकर हमारा रक्षक बनता है। अतः मैं वेदवाणी के निर्मल ज्ञान–सरोवर में डूबकी लगाता हूँ और सब भीतियों से रहित, सब अविद्याओं से मुक्त तथा सब कर्त्तव्य–बोधों से स्फूर्ति पाकर पूर्ण सुरक्षित हो जाता हूँ।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

अमृत–पान

● **महात्मा आनन्द स्वामी**

पिछले अंक में स्वामी जी ने बताया कि जिस प्रकार जिस स्थान पर चर्मकार चमड़े के कुप्पे, पट्टे, जूते, चप्पल बनाते है वहाँ बड़ी बदबू होती है। परन्तु चर्मकार को बदबू नहीं आती। ठीक उसी प्रकार गृहस्थ में रहते–रहते मनुष्य का मस्तिष्क गन्दा हो गया है। उस बदबू फैलाने वाले गृहस्थ को मनुष्य छोड़ना नहीं चाहता। वे आर्य भाई, जो गृहस्थ भोग चुके हैं, क्या उन्हें अब भी बदबू नहीं आती और क्या वे अब भी इस बदबू से निकलना नहीं चाहते।

मनुष्य को तृष्णारुपी बुखार चढ़ा हुआ है, इसलिए उसको कोई प्रभु भक्त दिखाई नहीं देता। ईश्वर–विश्वास से यह बुखार उतर सकता है। अतः अपनी आवश्यकताओं को कम करो। तृष्णा से दूर रहो। फिर ईश्वर–भक्त भी दिखाई देंगे। जब तक यह बुखार चढ़ा है, तब तक तो स्वादिष्ट भोजन भी स्वादहीन ही लगेंगे।

आगे पढ़ेंगे दो लघु कथायें

अच्छे की मित्रता

सुन, सुन! आज मैं तुम्हें एक कहानी सुनाता हूँ। अच्छे की मित्रता का किस्सा, नेक की मित्रता की कहानी और भले के प्यार की कहानी सुनाता हूँ।

बर्तन में दूध पड़ा था। मित्रता का क्या अर्थ है? इसका रहस्य क्या है? कौन–सा भेद है? इसे जानने के लिए अन्वेषक ने दूध में पानी मिला दिया। पानी दूध में मिल गया। दूध नपे पानी को अपनी रङ्गत, अपना गुण और अपना स्वाद प्रदान कर दिया। कौन जानता है कि पानी और दूध मिले हुए हैं? कोई हंस हो तो वह इनमें विवेक करे। कोई विज्ञान का मर्म जाननेवाला हो तो इनमें भेद करे। अन्यथा न मैं, न आप जान सकते हैं कि ये दो वस्तुएँ हैं।

मित्रता की परख करनेवाले ने अपना कार्य आरम्भ किया। पानी मिले हुए दूध को अग्नि पर रख दिया। दोनों मित्रों की परीक्षा होने लगी। कौन पहले जले? दूध ने कहा– "मैं जलता हूँ।" पानी ने कहा– "नहीं, पहले मुझे जल लेने दो। मुझे भाप बनकर उड़ने दो। जब तक मैं तेरे पास हूँ तुझे जलने न दूँगा। हाँ, जब मेरा एक–एक अङ्ग काट डाला गया। मेरा एक–एक रोम जला डाला गया तब फिर तेरी जान पर भी आ बनेगी। पानी ने यह कहा और जलने लगा।" भाप बनने लगी और ऊपर जाने लगी। मित्रता की परख करनेवाले ने कहा– "दूध अपने मित्र को जाते देखकर आहें भर रहा है। वही भाप के रूप में दिखाई देती हैं। साँय–साँय की आवाज् भी आहों का ही भाग हैं। अन्ततः पानी बहुत–कुछ जल गया। दूध का क्रोध अपने मित्र को इस कष्ट में देखकर निरन्तर बढ़ रहा था। वह चाहता था कि उस अग्नि को जिसने उसके मित्र को जलाया है, उड़ाया है, नष्ट कर दे। शीतल कर दे। चाहे स्वयं को इसपर बलिदान होना पड़े। अन्ततः बदला लेने की भावना भड़की और इस भड़क ने दूध को उभार दिया। दूध उभरा और बर्तन से बाहर निकलने ही लगा था कि अन्वेषक ने दूध पर पानी का छींटा दे दिया। दूध एक विचित्र ध्वनि में, एक निराले स्वर में राग गाता हुआ नीचे बैठ गया कि मुझे मेरा मित्र मिल गया है। जिसके लिए मैं उभरा था, उसका दर्शन हो गया है। अब मैं आराम से बैठता हूँ। अन्वेषक ने इस दृश्य को देखा । उसने मित्रता का भेद पता लगाया। मैं अपने मित्र के लिए जलूँ और मित्र मेरे लिए जले–

उलफ़त का तब मज़ा है कि दोनों हों बेकरार।
दोनों तरफ़ हो आग बराबर लगी हुई।।

1. (प्रेम), 2. (आनन्द), 3. (व्याकुल)

इसी प्रकार का प्रेम, ऐसी ही *मित्रता का रिश्ता जो लोग मित्र को* पहचाननेवाले मित्र के साथ जोड़ते हैं, परम मित्र परमात्मा का दर्शन करानेवाले वेद से जो प्रेम की लगन लगाते हैं, वेद और परमात्मा फिर उसको अपना भक्त बना लेते हैं, अपना मित्र बना लेते हैं और मित्र बनाकर प्रत्येक क्षण उसके अङ्ग–सङ्ग रहते हैं। जिस मनुष्य का मित्र वेद और ईश्वर हैं, फिर संसार में उसे न शोक रहता है, न मोह। उसके क्लेश मिट जाते हैं। वह शक्तिशाली बनकर सबका भला करता है और दूसरों को मित्रता के रहस्य से परिचित कराता है।

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

याज्ञवल्क्य के दार्शनिक सिद्धान्त

● रतन चन्द शर्मा

याज्ञवल्क्य बहुत बड़े विचारक और आत्म–तत्त्व–वेत्ता थे। वे यदि एक ओर सुकरात के समान क्रियात्मकता एवं प्रयोगात्मकता में विश्वास रखने वाले मनस्वी थे तो दूसरी ओर प्लेटो के समान आदर्शवादी विचारक थे। उनमें सुकरात एवं प्लेटो दोनों का समन्वित रूप देखा जा सकता है। उनके आत्म–सम्बन्धी सिद्धान्तों में दृश्य और अदृश्य, चिन्त्य और अचिन्त्य, शारीरिक और मानसिक, ऐहिक और पारलौकिक, स्थूल और सूक्ष्म, बौद्धिक और श्रद्धाप्रधान सभी तत्त्वों का समन्वय है। आत्मज्ञान के प्रकाश में वे हमें धीरे–धीरे ऊपर उठाते हैं। जैसे–जैसे हम ऊपर उठते हैं वैसे–वैसे हम अनुभव करने लगते हैं कि हम अन्धकार से प्रकाश में आ रहे हैं, अज्ञान से ज्ञान में पहुँच रहे हैं, मिथ्या से सत्य की ओर बढ़ रहे हैं, मर्त्य से अमर बन रहे हैं। अन्त में आनन्द ही आनन्द की अनुभूति होने लगती है और महाराज जनक को सम्बोधित करके कहे गए उनके (याज्ञवल्क्य के) शब्द साकार होकर हमारे सामने थिरकते हुए आने लगते हैं–**"एष ब्रह्मलोकः सम्राडेनं प्रापितोऽसि।"** (बृहादाण्यकोपनिषद् – 2.4)

महर्षि याज्ञवल्क्य ने ब्रह्मज्ञान की चर्चा करते हुए निम्नलिखित तत्त्वों पर विचार किया है–

(क) **आत्मकाम** (Self-love)– याज्ञवल्क्य के मतानुसार आत्मकाम सब प्रकार के प्रेम का मूलस्रोत है। आत्म–कामना से ही अर्थात् अपनी प्रियकामना से ही हमें दूसरे व्यक्ति प्रिय लगते हैं। उदाहरणार्थ जैसे–पति की कामना के लिए पति प्रिय नहीं होता, अपनी ही कामना के लिए पति प्रिय होता है, स्त्री की कामना के लिए स्त्री प्रिया नहीं होती, वरन् आत्म–कामना के लिए ही स्त्री प्रिया होती है, पुत्रों की कामना के लिए पुत्र प्रिय नहीं होते, वरन् आत्मकामना के लिए पुत्र प्रिय होते हैं। यही बात धन, लोक, परलोक, ब्राह्मण, क्षत्रिय, देवता आदि सब वस्तुओं के लिए कही जा सकती है। यही बात स्वयं ब्रह्म अथवा ईश्वर के लिए कही जा सकती है।

जब सब कुछ आत्मकामना के लिए ही है तो फिर समझ लेना चाहिए कि "आत्मा ही दर्शनीय, श्रवणीय, मननीय और ध्यान करने के लिए योग्य है। आत्मा के ही दर्शन, श्रवण, मनन और विज्ञान से इस सब का (ब्रह्माण्ड का) ज्ञान हो जाता है।"

"आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः **श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः। मैत्रय्यात्मनो वा अरे दर्शनेन श्रवणेन मत्या विज्ञानेनेदं सर्वं विदितम्।"** (बृहदारणयक. 2,4,5)

आत्मा से भिन्न कुछ भी नहीं है। "यह ब्राह्मण जाति, यह क्षत्रिय जाति, ये लोक, ये देवगण, ये भूतगण और ये सब कुछ, जो भी है, सब आत्मा ही हैं।" आत्मा के ज्ञान से सब का ज्ञान हो जाता है। आत्मा ही स्वयं ब्रह्म है, इसलिए आत्मज्ञान ही ब्रह्मज्ञान है, आत्मानुभूति ही ब्रह्मानुभूति है, परमानन्द है। इस प्रकार आत्मकाम ही आत्मानुभूति एवं परम ब्रह्मानुभूति का साधन है।

(ख) **एषणा** (Desire)– उपनिषदों में तीन प्रकार की एषणाएँ मानी गई हैं– पुत्रैषणा, वित्तैषणा और लोकैषणा। याज्ञवल्क्य कौषीतकेय कहोल को (बृहदारणयक. 3,5,1) समझाते हुए कहते हैं कि इन एषणाओं का मूल कारण है आत्मैषणा अर्थात् आत्मकाम्यता। ये सभी प्रकार की एषणाएँ एक प्रकार से आत्मप्रियता ही है, इसीलिए इन के मिल जाने पर व्यक्ति सुखी होता है और न मिलने पर दुःख का अनुभव करता है। परन्तु यदि एषणा पुत्र, धन और लोक के विषय में न होकर आत्मा के ही विषय में हो, अपने लिए और अपने ही विषय में हो, तो उसकी प्राप्ति पर सुख नहीं होगा तथा अप्राप्ति पर दुःख नहीं होगा। इससे आत्मतत्त्व की उपलब्धि होगी और आत्मोपलब्धि ही ब्रह्मज्ञान है, ब्रह्मोपलब्धि है, क्योंकि यह सब कुछ ब्रह्म ही है और ब्रह्म ही सब कुछ है। आत्म–प्रेम का अर्थ है ब्रह्म–प्रेम और ब्रह्मज्ञान तथा ब्रह्म–प्रेम से ज्ञान, आनन्द और अमरता की प्राप्ति होती है। इस आत्मज्ञान को सम्पन्न कर आत्मज्ञानरूप बल से स्थित रहने की इच्छा करनी चाहिए।

जीवात्मा द्वारा परब्रह्म के साथ तादात्म्य स्थापित करना ही जीवात्मा की मुक्ति है। इसकी प्राप्ति आत्मज्ञान से ही होती है। आत्मज्ञान का अर्थ है ब्रह्मज्ञान और ब्रह्मज्ञान का अर्थ है चित्, आनन्द और अमरता की उपलब्धि। इसलिए हमें आत्मज्ञान प्राप्त करना चाहिए, आत्मतत्त्व को जानना चाहिए एवं उसी की एषणा करनी चाहिए। याज्ञवल्क्य के मतानुसार जो व्यक्ति आत्मतत्त्व को जान लेता है, पाप कर्म से वह अपना सम्बन्ध नहीं रखता। वह स्थितप्रज्ञ बन जाता है। पाप उसे जीत नहीं सकता, उल्टे वह पाप को जलाता है। वह निष्पाप, रागद्वेषशून्य, सन्देहरहित ब्राह्मण बन जाता है। यही ब्रह्मलोक की प्राप्ति है। याज्ञवल्क्य कहते हैं–

"तस्मादेवंविच्छान्तो दान्त उपरतस्तितिक्षुः समाहितो भूत्वात्मन्येवात्मानं पश्यति सर्वमात्मानं पश्यति नैनं पाप्मा तरति सर्वं पाप्मानं तरति नैनं पाप्मा तपति सर्वं पाप्मानं तपति विपापो विरजोऽविचिकित्सो ब्राह्मणो भवत्येष ब्रह्मलोकः।" (बृहदारणयक. 4,5,23)

ज्ञान और अज्ञान, हर्ष और शोक, अमरता और मृत्यु परस्पर विरुद्ध पदार्थ हैं। अज्ञान, शोक और मृत्यु की इच्छा (एषणा) रखने वालों को ज्ञान, हर्ष और अमरता को छोड़ना होगा और ज्ञान, हर्ष तथा अमरता को चाहने वालों को अज्ञान, शोक एवं मृत्यु को छोड़ना पड़ेगा। परस्पर विरुद्ध होने के कारण दोनों को साथ–साथ नहीं रखा जा सकता। ज्ञान, आनन्द और अमरता की प्राप्ति का अर्थ है ब्रह्म अथवा ईश्वर की प्राप्ति और वह प्राप्त हो सकती है आत्मैषणा अर्थात् आत्मज्ञान की कामना से, न कि पुत्रैषणा, वित्तैषणा और परलोकैषणा से। अतः, हमें आत्मज्ञान की इच्छा करनी चाहिए और उसके द्वारा ब्रह्म के साथ तादात्म्य प्राप्त करना चाहिए, जो कि सब एषणाओं का लक्ष्य है, सब एषणाओं की प्राप्ति है।

(ग) **पुण्य–पाप** (Good and Evil)– याज्ञवल्क्य द्वारा प्रतिपादित पुण्य और पाप सम्बन्धी मान्यताओं को जानने से पहले उनके द्वारा निर्दिष्ट सकाम और निष्काम व्यक्तियों की परिभाषा समझ लेनी चाहिए। उनके मतानुसार सकाम और निष्काम व्यक्तियों में वही अन्तर है, जो मर्त्य और अमर्त्य में है। सकाम व्यक्ति सन्तान, सम्पत्ति, जनपद, पूर्वजों और देवताओं की कामना करता है, परन्तु निष्काम व्यक्ति इन वस्तुओं की कामना न करके आत्मा की कामना करता है और इस प्रकार ब्रह्मलोक की कामना करता है।

पाप और पुण्य का अन्तर स्पष्ट करते हुए याज्ञवल्क्य कहते हैं कि जो कर्म हमें सन्देह, अन्धकार, भ्रम, द्वैत और अज्ञान की ओर ले जाते हैं, एवं जिनका परिणाम क्षुधा, पिपासा, शोक, दुःख, नाश और मृत्यु होता है, वे पापकर्म हैं। इसके विपरीत जो कर्म हमें इन सब बुराइयों से दूर रखते हैं और ज्ञान, आनन्द तथा अमरता की ओर ले जाते हैं, वे पुण्य कर्म हैं। कोई भी व्यक्ति अपने कर्म तथा आचरण के अनुसार पापात्मा अथवा पुण्यात्मा बनता है। मनुष्य काममय है, वह जैसी कामना वाला होता है वैसा ही सङ्कल्प करता है, जैसे सङ्कल्प वाला होता है वैसा ही कर्म करता है और जैसा कर्म करता है वैसा ही फल पाता है। याज्ञवल्क्य कहते हैं–

"काममय एवायं पुरुष इति। स यथाकामो भवति तत्क्रतुर्भवति। यत्क्रतुर्भवति तत् कर्म कुरुते। यत् कर्म कुरुते तदभिसम्पद्यते।" (बृहदारणयक. 4,4,5)

परन्तु याज्ञवल्क्य के अनुसार यह व्यवस्था सकाम व्यक्तियों के विषय में है, निष्काम व्यक्तियों के विषय में नहीं। निष्काम व्यक्ति अकाम होकर आत्मनिरत होता है। उससे वह आप्तकाम और आत्मकाम बनता है और ब्रह्म बन कर ब्रह्म को प्राप्त करता है।

"योऽकामो निष्काम आप्तकाम आत्मकामो न तस्य प्राणा उत्क्रमन्ति ब्रह्मैव सन् ब्रह्माप्यान्पोति।" (बृहदारणयक. 4,4,6)

अतः याज्ञवल्क्य के मतानुसार निष्काम होकर आत्मकाम बनना चाहिए।

(घ) **विद्या** (Knowledge)– याज्ञवल्क्य के अनुसार विद्या (ज्ञान) और अविद्या (अज्ञान) दो विरुद्ध बातें हैं। विद्या श्रद्धा है तो अविद्या विचिकित्सा है, विद्या प्रकाश है तो अविद्या अन्धकार है, विद्या सत्य है तो अविद्या अनृत है, विद्या पुण्य है तो अविद्या पाप है, विद्या आनन्द है तो अविद्या शोक है, विद्या अमृतत्व है तो अविद्या मृत्यु है। विद्या हमें ब्रह्म की ओर ले जाती है और अविद्या हमें ब्रह्म से दूर ले जाती है। ब्रह्म दिव्य, प्रकाशमय, आनन्दमय, अमर और सत्य है। उसे अविद्या के द्वारा और असत्य के द्वारा प्राप्त नहीं किया जा सकता। उसे केवल विद्या अर्थात् ज्ञान के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। विद्या के द्वारा जीव और ब्रह्म में ऐक्य और तादात्म्य का भाव उत्पन्न होता है। यही मोक्ष है।

याज्ञवल्क्य कहते हैं कि ब्रह्म (ईश्वर) स्वयं ज्ञान है, अतः ज्ञान की सार्थकता इस बात में है कि उसके द्वारा ज्ञानमय ब्रह्म के साथ जीव की एकात्मकता हो जाए और जीवात्मा 'सोऽहम्' अर्थात् "मैं वह ब्रह्म हूँ' इस सत्य की अनुभूति प्राप्त करे। 'सोऽहम्' की अनुभूति का अर्थ है द्वैतभाव का नाश। याज्ञवल्क्य उसी विद्या अथवा ज्ञान को ठीक समझते हैं जो द्वैत–भाव के नाश द्वारा 'सोऽहम्' रूपी अद्वैत–भाव (जीव और ब्रह्म के ऐक्य) की अनुभूति कराता है। ऐसा ज्ञान केवल तर्क नहीं होता। तर्क तो वाणी का दुरुपयोग (वाचो विग्लापनम्) मात्र है। 'सोऽहम्' के भाव को जागृत करने के लिए याज्ञवल्क्य 'नेतिवाद' को स्वीकार करते हैं। 'नेतिवाद' द्वारा सभी दृश्य और अदृश्य पदार्थों के प्रतिषेध द्वारा आत्मा और ब्रह्म की स्थापना की जाती है।

इस प्रकार विद्या का उद्देश्य है अविद्या का नाश और आत्मज्ञान द्वारा ब्रह्म के साथ 'सोऽहम्' रूपी ऐक्य की अनुभूति। इसीलिए याज्ञवल्क्य कहते हैं–

"तमेव धीरो विज्ञाय प्रज्ञां कुर्वीत ब्राह्मणाः। नानुध्यायाद् बहून् शब्दान् वाचो विग्लापनं हि तत्"। (बृहदारणयक. 4,4,29)

अर्थात् बुद्धिमान् ब्राह्मण को (विद्या द्वारा) उसे ही जान कर उसी में प्रज्ञा करनी चाहिए। बहुत शब्दों का अनुध्यान (निरन्तर चिन्तन) नहीं करना चाहिए; वह तो वाणी का विग्लापन मात्र है।

(ङ) **आत्मा** (Soul) – याज्ञवल्क्य आत्मवादी हैं और उनका कहना है कि आत्मा ही दर्शनीय, श्रवणीय, मननीय और निदिध्यासन के योग्य है। आत्मा का दर्शन, श्रवण, मनन और विज्ञान हो जाने पर सब का ज्ञान हो जाता है।

"आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यो मैत्रेय्यात्मनि खल्वरे दृष्टे श्रुते मते विज्ञान इदं सर्वं विदितम्।" (बृहदारणयक 4,5,6)

आत्मा का स्वरूप क्या है? याज्ञवल्क्य के पूर्ववर्ती कुछ आचार्यों ने प्राण को ही जीवात्मा

शेष पृष्ठ 04 पर ☞

(पिछले अंक से आगे)

पर्यावरण संरक्षण यज्ञ

● वेद प्रकाश शास्त्री

वायुशुद्धि संरक्षण–

ओ३म् वाताय स्वाहा।। यजु. 22/26

वायु पर्यावरण का एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है. इसकी शुद्धि के लिए यह आहुति अत्यन्त श्रद्धापूर्वक समर्पित है।

ओ३म् धूमाय स्वाहा।। यजु. 22/26

अग्नि में प्रदान की गई आहुतियों से उत्पन्न धुएँ के लिए यह यज्ञ हो रहा है।

हवि द्रव्य के सूक्ष्म कण धुएँ के रूप में ऊपर उठकर जलबाष्प से मिलकर अभ्र और मेघ रूप में परिवर्तित हो जाते हैं और वर्षा में सहायक होते हैं। जो वायु को शुद्ध करते है। अतः यज्ञ वायु की शुद्धि और वर्षा का मुख्य कारण है।

भगवान् श्रीकृष्णा गीता में कहते हैं–

अन्नाद् भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसंभवः।

यज्ञाद् भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः।। 3/14

सम्पूर्ण प्राणी अन्न से उत्पन्न होते हैं, अन्न की उत्पत्ति वृष्टि से होती है और वृष्टि यज्ञ से होती है यज्ञ कर्म से उत्पन्न होता है।

ओ३म् पातु वातो अन्तरिक्षात् स्वाहा।। ऋ. 10/158/1

अन्तरिक्ष के विकारों से वायु हमारी रक्षा करे।

ओ३म् त्रायतां मरूतां गणः स्वाहा।। ऋ. 10/137/5

मरुद्गण अर्थात् वायुदेव हमारी रक्षा करें।

वस्तुतः वायु को देवता कहा गया है– वातो देवता।

ओ३म् शन्नोवातः पवतां स्वाहा।। यजु. 36/10

वायु हमारे लिए कल्याणकारी होकर बहे।

ओ३म् शं न इषिरो अभिवातु वातः स्वाहा।। ऋ. 7.35.4

वायु हमारे लिए गतिशील होकर बहे।

ओ३म् शम्वस्तु वायुः स्वाहा।। ऋ. 7.35.9

वायु हमारे लिए शान्तिदायक हो।

.... **क्रमशः**

4–E कैलाश नगर
फाजिल्का

☞ *पृष्ठ 03 का शेष*

याज्ञवल्क्य के दार्शनिक..

माना है, परन्तु याज्ञवल्क्य आत्मा को प्राण का भी प्राण, चक्षु का चक्षु, श्रोत्र का श्रोत्र और मन का मन मानते हैं। वे कहते हैं–

"प्राणस्य प्राणमुत चक्षुषश्चक्षुरुत श्रोत्रस्य श्रोत्रं मनसो ये मनो विदुः।" (बृहदारणयक. 4,4,18)

उनका अभिप्राय यह है कि प्राण, चक्षु श्रोत्र और मन तो आत्मा के साधन अथवा उपकरण हैं जिन के द्वारा वह विभिन्न पदार्थों का ज्ञान प्राप्त करता है। उन्हें अथवा उनके संघात को, जैसा कि कुछ आचार्य मानते हैं, आत्मा नहीं कहा जा सकता। याज्ञवल्क्य के अनुसार "यह जो प्राणों में बुद्धिवृत्तियों के भीतर रहने वाला विज्ञानमय ज्योतिः स्वरूप पुरुष है, जो समान हुआ इस लोक और परलोक दोनों में संचार करता है, वह आत्मा है।"

योऽयं विज्ञानमयः प्राणेषु हृद्यन्तज्योंतिः पुरुषः स समानः सन्नुभौ लोकावनुसञ्चरति।" (बृहदारणयक. 4,3,7)

वह आत्मा अजर, अमर और विभु है। छान्दोग्य उपनिषद् में शरीर को आत्मा का नगर बताया है। याज्ञवल्क्य शरीर को आत्मा का कीड़ाक्षेत्र मानते हैं।

आत्मा अथवा पुरुष देहेन्द्रियसंघात को प्राप्त कर जन्म ग्रहण करता है। परन्तु आत्मा के जन्म का अर्थ आत्मा का उत्पन्न होना नहीं है, क्योंकि आत्मा अजन्मा है। 'उसका जन्म' यह केवल औपचारिक प्रयोग है। जन्म की अवस्था में वह शरीर, इन्द्रियों और मन से संश्लिष्ट हो जाता है। तब वह पापों से युक्त हो जाता है। मरते समय अर्थात् उत्क्रमण करते समय वह पापों को त्याग देता है। याज्ञवल्क्य कहते हैं–

स वा अयं पुरुषो जायमानः शरीरमभिसम्पद्यमानः पाप्मभिः संसृज्यते स उत्क्रामन् भ्रियमाणः पाप्मनो विजहाति। (बृहदारणयक. 4,3,7)

याज्ञवल्क्य के मतानुसार आत्मा के दो स्थान हैं–यह लोक और परलोक–सम्बन्धी स्थान। तीसरा स्वप्नस्थान सान्ध्यस्थान है। उस सान्ध्य स्थान में स्थित रह कर वह इस लोकरूपस्थान और परलोकरूपस्थान दोनों को देखता है। उसी तीन अवस्थाएँ होती हैं–जागरित, स्वप्न और सुषुप्ति। जागरित अवस्था में पुरुष (आत्मा) रमण और विहार कर एवं पुण्य और पाप को देखकर फिर जिस प्रकार आया था उसकी प्रकार यथापूर्व स्वप्नस्थान को लौट जाता है। जागरित अवस्था में ही वह देह और इन्द्रियों से संश्लिष्ट हो कर पुण्य, पाप, कामनाओं आदि से सम्बन्ध जोड़ता है। स्वप्नावस्था में वह अपने स्वरूप से पूर्णतया परिचित होता है। उस समय वह इस स्थूल शरीर को अचेतन करके और स्वयं अपने वासनामय देह को रच कर अपने प्रकाश से शयन करता है और स्वयं ज्योतिःस्वरूप होता है। उस समय रथ, अश्व, मार्ग, आनन्द, मोद, प्रमोद, कुण्ड, सरोवर आदि कुछ भी नहीं होते, परन्तु वह स्वयं उनकी रचना कर लेता है। वह स्वयं न सोता हुआ सोए हुए समस्त पदार्थों को प्रकाशित करता है। स्वप्नावस्था में वह ऊँच–नीच आदि को प्राप्त होता हुआ बहुत से रूप धारण कर लेता है। कुछ आचार्य उसके स्वप्नस्थान को भी जागरित स्थान ही गिनते हैं। सुषुप्ति अवस्था में आत्मा पुण्य अथवा पाप से सर्वथा असम्बद्ध होता है और हृदय के सम्पूर्ण शोकों को पार कर लेता है। उस समय वह केवल स्वप्रकाश को ही देखता है, किसी अन्य दृश्य वस्तु को नहीं देखता। उसकी अद्वैत दृष्टि होती है। इस अवस्था में न तो वह कोई स्वप्न ही देखता। उसकी अद्वैत दृष्टि होती है। इस अवस्था में न तो वह कोई स्वप्न ही देखता है और न किसी भोग की इच्छा ही रखता है।

(च) ब्रह्म (Supreme Soul)– याज्ञवल्क्य के मतानुसार ब्रह्म देवाधिदेव है। वह एक, अद्वितीय, अद्वैत, सत्, चित्, आनन्द, अनादि, अनन्त और अपार है। वह शाश्वत और अमर है। उसमें न प्रकाश है, न अन्धकार; न भाव है, न अभाव; न अन्तर है, न बाह्य। वह प्राणों का प्राण, चक्षु का चक्षु, श्रोत्र का श्रोत्र और मन का मन है। वह विश्वकृत् और भूतपाल है। वह सब से पृथक् है और सब में समाया हुआ है। वह सत् है और त्यत् भी है। उसमें न क्षुधा है, न पिपासा; न भय है, न भ्रम; न सन्देह है, न अज्ञानः न शोक है, न दुःख; न नाश है, न मृत्यु। वह शुद्ध ज्ञान है, शुद्ध आनन्द है, शुद्ध अमरत्व है। वह एक है और अन्तर्यामी है, क्योंकि वह सब वस्तुओं में है और सब वस्तुएँ उस में हैं। वह अमृत अदृष्ट परन्तु द्रष्टा, अश्रुत परन्तु श्रोता, अमत परन्तु मन्ता, अविज्ञात परन्तु विज्ञाता है।

उस परम ब्रह्म को नेति–नेति के सिद्धान्त द्वारा जाना जा सकता है। नेतिवाद द्वारा ब्रह्माण्ड की सब वस्तुओं का, सब भावों और अभावों का प्रतिषेध कर देने पर ब्रह्म का बोध होता है। ब्रह्म का ज्ञान प्राप्त करना और उसकी अनुभूति प्राप्त करना आवश्यक है, क्योंकि उसके ज्ञान के बिना हमारा सब ज्ञान निष्फल है, निरर्थक है। हमें ब्रह्म को जानना चाहिए, क्योंकि उसके जान लेने पर और कुछ ज्ञातव्य नहीं रह जाता। ब्रह्मज्ञान ही यथार्थ ज्ञान है, यथार्थ आनन्द है, यथार्थ अमरत्व है। याज्ञवल्क्य उसे प्रथमोत्तम कह कर पुकारते हैं। महीदास और अरस्तू ने उसे 'विचार की शुद्ध चेष्टा' बताया है। उद्दालक के अनुसार वह एक और अद्वितीय एक है। याज्ञवल्क्य इन दोनों मतों को स्वीकार करते हैं, परन्तु साथ ही कहते हैं, कि हमें उसे 'सोऽहम्' अर्थात् 'वह मैं ही हूँ' की अनुभूति द्वारा अनुभव करना चाहिए, क्योंकि आत्मा ही ब्रह्म है, दोनों में अद्वैतभाव है।

(छ) मन (Mind) – याज्ञवल्क्य के मतानुसार मन अथवा चित्त आत्मा का दिव्य चिन्तन–स्थान है। आत्मा यदि कर्ता बनता है तो मन के द्वारा ही। कहीं–कहीं तो याज्ञवल्क्य क्रियाशील मन को ही आत्मा समझते हुए प्रतीत होते हैं। उनका कहना है कि मन ही सोचता है, सङ्कल्प करता है और अनुभव करता है। इन्द्रियों से सम्बद्ध होकर वह बाह्य पदार्थों का ज्ञान प्राप्त करता है। परन्तु याज्ञवल्क्य के मतानुसार विद्या अथवा ज्ञान हृदय का गुण है, न कि मन का। उनके अनुसार सङ्कल्प मन में रहता है और ज्ञान हृदय में। उन्होंने इन्द्रियों तथा उनके विषयों की गिनती इस प्रकार की है–स्पर्श और उनका आयतन त्वक्, गन्ध और उनका आयतन नासिका, रस और उनका आयतन जिह्वा, रूप और उनका आयतन चक्षु, शब्द और उनका आयतन श्रोत्र, संकल्प और उनका आयतन मन, विद्याएँ और उनका आयतन हृदय, कर्म और उनका आयतन हाथ, आनन्द और उनका आयतन उपस्थ, विसर्ग और उनका अयन पायु, मार्ग और उनके अयन चरण, वेद और उनका अयन वाक्।

(ज) रूप (Matter) – रूप अर्थात् रूपवान् जगत् के प्रतिपादन में याज्ञवल्क्य ने उद्दालक आरुणि का अनुकरण किया है। उनके मतानुसार मन अथवा चेतना शक्ति में तथा जड़तत्त्व में कोई मौलिक अन्तर नहीं है, क्योंकि दोनों वास्तव में एक ही असीम आत्मतत्त्व का विभिन्न स्तरों पर आविर्भाव है। इस मत के आधार पर बाद में श्री शंकराचार्य ने विवर्तवाद की स्थापना की थी। जड़तत्त्व में भूत अथवा महाभूत सम्मिलित हैं। याज्ञवल्क्य ने कणाद के समान उनकी संख्या निश्चित नहीं की। परन्तु 'बृहदारण्यकोपनिषद्' में एक स्थान पर उन्होंने पृथ्वी, जल, वायु, तेज और आकाश का उल्लेख किया है। वे कहते हैं–

"स वा अयमात्मा ब्रह्म..........पृथ्वीमय आपोमयो वायुमय आकाशमयस्तेजोमयः....."

अर्थात् वह यह आत्मा ब्रह्म पृथ्वीमय, जलमय, वायुमय, आकाशमय और तेजोमय भी है।

विश्व के दार्शनिक भाग–4
नित्यानन्द विश्व ग्रन्थमाला
से साभार

स्त्री, पुरुष – दोनों एक दूसरे के पूरक हैं, प्रतिद्वन्द्वी नहीं

● कृष्ण चन्द्र गर्ग

आजकल स्त्री और पुरुष में समानता की वकालत की जा रही है। इसमें समानता की कम और प्रतिद्वन्द्विता की बू ज्यादा आती है। यह भावना परिवार में सौहार्द के लिए खतरनाक है। इससे पति–पत्नी में प्रेम की अपेक्षा द्वेष की भावना पनपती है जो परिवार के लिए सुखकारी नहीं है और बच्चों के विकास पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

बृहदारण्यक उपनिषद् में ऋषि याज्ञवल्क्य कहते हैं, "स्त्री और पुरुष चने के आधे–आधे दल की भाँति हैं। जैसे दोनों दल मिलकर पूरा चना बनता है, ऐसे ही स्त्री और पुरुष दोनों मिलकर ही पूर्ण होते हैं।"

Benjamin Franklin, a great American Philosopher of 18th century, says, "Man and women have each of them qualities and tempers in which the other is deficient, and which in union contribute to the common felicity. Single and seperate they are not the complete human beings ; they are like the odd halves of scissors."

अर्थ – अठारहवीं सदी के महान अमरीकी दार्शनिक बैंजामिन फ्रैंकलिन कहते हैं, "पुरुष और स्त्री – प्रत्येक में वे गुण और स्वभाव हैं जो दूसरे में नहीं हैं और वे मिलकर दोनों एक दूसरे को प्रसन्नता और सुख देते हैं। वे दोनों अलग–अलग पूर्ण मानव नहीं बनते, वे कैंची के दो अलग अलग फालों की तरह हैं।"

स्त्री और पुरुष दोनों के कार्य और जिम्मेदारियाँ अलग–अलग हैं। स्त्री घर में गाय आदि पशुओं की देख–भाल करती है, बच्चों का पालन–पोषण करती है, पति की जरूरतों को पूरा करती है, सास, ससुर, देवरों और ननदों को उचित सम्मान देती है। घर की साफ–सफाई रखना, उत्तम स्वास्थ्य वर्धक भोजन तैयार करना, रोगी होने पर परिवार को औषधि देना, घर में आए अतिथियों का यथायोग्य सत्कार करना, घर के खर्च के हिसाब रखना – ये सभी काम स्त्री के अधीन रहते हैं।

पुरुष घर को चलाने के लिए तथा शुभ कामों में दान देने के लिए सात्विक तरीकों से धन कमाता है। पत्नी को, बच्चों को तथा परिवार के अन्य सभी सदस्यों को सुरक्षा प्रदान करता है। पुरुष बाहर से थका–मान्दा और परेशान आता है तो स्त्री मीठी और शान्ति देने वाली वाणी बोलकर उसे शान्त करती है। एक दूसरे को देखकर पति, पत्नी का चेहरा खिल उठता है।

अथर्ववेद का मन्त्र है–

इह इमौ इन्द्र सं नुद चक्रवाका इव दम्पती।
प्रजया एनौ सु अस्तकौ विश्वम् आयुः व्यश्नुताम्।।

अर्थ – पति, पत्नी दोनों मिलकर चकवा, चकवी की भाँति प्रेमपूर्वक रहें। उत्तम घर वाले और उत्तम सन्तान वाले होकर सारी आयु आनन्द से व्यतीत करें।

मनुस्मृति में महर्षि मनु लिखते हैं–

सन्तुष्टो भार्यया भर्ता भर्त्रा भार्या तथैव च।
यस्मिन्नेव कुले नित्यं कल्याणं तत्र वै ध्रुवम्।।

अर्थ : जिस परिवार में पत्नी से प्रसन्न पति और पति से प्रसन्न पत्नी रहती है उस कुल में सदा निश्चित कल्याण होता है।

ये सारी बातें बताती हैं कि पति–पत्नी दोनों एक दूसरे के पूरक हैं, प्रतिद्वन्द्वी नहीं।

स्त्री सम्मान की बात भी जोर शोर से उठाई जा रही है। इस सम्बन्ध में ऋग्वेद का मन्त्र है–

सम्राज्ञी श्वसुरे भव सम्राज्ञी श्वश्रवा भव।
ननान्दरि सम्राज्ञी भव सम्राज्ञी अधि देवृषु।।

अर्थ – पति अपनी पत्नी से कहता है, हे स्त्री! तू अपने सास, ससुर, ननदों और देवरों सबके साथ प्रेम पूर्वक व्यवहार करके घर में रानी की तरह रह।

इस सम्बन्ध में महर्षि मनु लिखते हैं–

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः।।

अर्थः जिस घर में स्त्रियों का सत्कार होता है उस घर में देवता वास करते हैं अर्थात् उस घर में उत्तम भोजन पदार्थ और उत्तम सन्तान होते हैं। और जिस घर में स्त्रियों का सम्मान नहीं होता वहाँ सब क्रियाएँ निष्फल हो जाती हैं।

831 सैक्टर 10, पंचकूला, हरियाणा
दूरभाष : 0172–4010679

मातृ वत्सला मृत्यु

● डॉ. सुरेन्द्र कुमार शर्मा

मैं आगे बढ़ रहा था। मुझे लगा कि कोई छाया मेरा पीछा कर रही है। पीछे से आवाज आई, '' रुक–रुक '' सुनकर मैं डर गया। मेरी गति और तेज हो गई। वह छाया भी मेरे पीछे तेजी से बढ़ने लगी। उसने अपने हाथों से मेरे सिर के केशों को खीचा। कुछ केश उसके हाथ में आ गए और भय के कारण मेरे कुछ केश सफेद हो गए।

उसने फिर पीछे से आवाज़ दी। मैं नहीं रुका। उसने ज़ोर से पीछे से थप्पड़ मारा। मेरे दो–तीन दाँत टूट गए और गाल पिचक गए। मैं फिर भी नहीं रुका। उसने जोर से मेरे कान खीचें। मेरे कान लाल हो गए और मैं बधिर हो गया। आँखों में धुँधलापन आ गया। फिर भी हाँफता हुआ दौड़ता रहा। फिर उसने मेरे पैरों पर प्रहार किया। मेरे पैरों के जोड़ हिल गए और घुटने मुड़ गए। तब मैं वहीं पर धड़ाम से गिर पड़ा। फिर वह छायामयी आकृति मेरे सामने आ गई।

''आप कौन हैं, क्यों मेरे पीछे पड़ी है?'' मैंने डरते हुए उससे पूछा।

''मैं मृत्यु हूँ, तुम्हारी माँ।'' मृत्यु माँ, और माँ भी। तुमने मेरा सिर गंजा कर दिया, दाँत तोड़ दिए, गाल पिचका दिए। तुम कैसी माँ हो?

''आज्ञा का उल्लंघन करने वालों के साथ यही किया जाता है।''

''तुम माँ हो तो मैं कौन हूँ।''

''मेरी शरारती सन्तान, मेरा बच्चा। अगर तुम रुक जाते तो ऐसी नौबत न आती।''

''तुम मुझे क्यों रोकना चाहती थी?

''तुम्हारे वस्त्र बदलने के लिए।''

''क्या मैं पहले निर्वस्त्र था या मेरे वस्त्र मलिन थे?''

''हाँ, तुम्हारे वस्त्र जीर्ण–शीर्ण हो चुके थे। मैं माँ की भूमिका निभाते हुए तुम्हें नए वस्त्र पहनाना चाहती थी। बच्चा वस्त्र उतारते समय रोता है परन्तु नए वस्त्र पहन कर प्रसन्न होता है।''

''मेरी समझ में नही आता कि तुम मेरे कौन से वस्त्र उतारना चाहती थीं।''

''क्या तुमने गीता का वह प्रसिद्ध श्लोक नहीं पढ़ा–' **वासांसि जीर्णानि यथा विहाय, नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।'** अर्थात् जैसे मनुष्य पुराने कपड़ों को उतार कर नए वस्त्र धारण करता है वैसे ही मनुष्य भी पुराने शरीर को छोड़कर नए शरीर को धारण करता है। मैं भी तुम्हें नया शरीर दूँगी।''

''मुझे नहीं चाहिए तुम्हारा नया शरीर। मैं इसी शरीर में संतुष्ट हूँ।''

'' पगले, मैं तेरी मृत्यु रूपी माँ हूँ। अभी तो मैं तुझे समझा रही हूँ। लेकिन ऐसा समय आएगा जब तू चिल्ला–चिल्ला कर, रो–धो कर कहेगा, 'माँ, मेरा शरीर रुपी वस्त्र बदल दे। यह मुझ से बरदाश्त नहीं होता।'

''ऐसी नौबत कब आएगी।'' मैंने चौंक कर माँ बनी हुई मृत्यु से पूछा।

''जब तू बूढ़ा हो जाएगा। रोग ग्रस्त हो जाएगा। बिस्तर पर ही मल–मूत्र करने लगेगा।''

''तुम ठीक कहती हो माँ, ''मेरे मुँह से पहली बार 'माँ' शब्द निकला।

''अब आया न रास्ते पर।''

''मैं क्या करुँ, कुछ समझ में नहीं आता। मुझे डर लगता है।''

''अपने पूर्वजों से सबक ले। तेरे पूर्वज कठोपनिषद् के नचिकेता ने क्या मृत्यु के स्वरूप को नहीं समझा था! क्या महात्मा बुद्ध ने मृत्यु की अनिवार्यता को समझकर सांसारिक सुखों से किनारा नहीं कर लिया था। क्या आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द ने सहर्ष मृत्यु का आलिंगन करते हुए यह नहीं कहा था, '' भगवान्, तूने विचित्र लीला की''

''मैं फिर भी नहीं समझ पा रहा हूँ कि आप कौन हैं।''

''मैंने तुम्हें पहले ही बता दिया था कि मैं तुम्हारी माँ हूँ, क्योंकि मेरी तुम्हारे प्रति ममता है। मैं तुम्हारी जननी हूँ क्योंकि मैंने तुमको जन्म दिया है।''

''बड़ी विचित्र बात है। प्राण हरने के लिए उतावली हो रही हो और कह रही हो, स्वयं को माँ और जननी।''

''तू तो बिल्कुल नादान है। मैं तुम्हारी प्रकृति स्वरुपिणी माँ भी हूँ।' मेरी कितनी माताएँ है? पहले दो माताएँ बताईं, अब एक माता और जोड़ दी, प्रकृति स्वरुपिणी माता। ज़्यादा चतुरता मत दिखाइए।''

''सुन मेरे नादान बच्चे! तीन गुण होते हैं– सत्व, रज और तम। इन्हीं की साम्यावस्था का नाम है प्रकृति। प्रकृति के ये तीनों गुण तुझ में भी समाए हुए हैं। इसलिए तू प्रकृति की संतान है। यही प्रकृति मुझे भोग प्रदान करके अपवर्ग (मोक्ष) भी प्रदान करेगी– **'भोगापवर्गार्थं दृश्यम्'**

''पर मैं अभी मरना नहीं चाहता। लम्बी आयु चाहता हूँ।''

''जाति, आयु और भोग तेरे अधिकार में नहीं है। ये तो परमात्मा के अधिकार में हैं।''

''लेकिन मुझे मरने से डर लगता है।''

''डर उन्हें लगता है जिन्होंने इस लोक में बुरे कर्म किए हों और जिनकी अगले लोक या अगले जन्म की तैयारी न हो। क्या तेरी अगली जन्म की तैयारी नहीं है।''

''कैसे!''

''मैं निरंतर साधना, सत्कर्म और सेवा में तल्लीन रहता हूँ।''

''फिर डर कैसा? क्या मरने के लिए तैयार है?

''कैसे मरना होगा!''

''समाधिस्थ मुद्रा में, हर पल परमात्मा से जुड़ा हुआ।''

''फिर क्या होगा!''

''मैं आऊँगी?''

''आप कौन?''

''कितनी बार समझाया है–तेरी माँ, मृत्यु।

''आप क्या करेंगी?''

''तुझे अपनी गोद में बैठाउँगी, उस पार ले जाऊँगी। क्या बैठना है मेरी गोद में!''

''बैठता हूँ, पूर्ण समर्पण करता हूँ।''

''शाबास।''

230, आर्य वानप्रस्थ आश्रम
ज्वालापुर (हरिद्वार)
मो. 9639149995

ईश्वरीय ज्ञान वेद के पुनरुद्धारक, रक्षक व प्रचारक महर्षि दयानन्द

● मनमोहन कुमार आर्य

भारत का इतिहास संसार में सबसे प्राचीन है। भारत के पास महाभारत नामक इतिहास ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ में वर्णित महाभारत युद्ध की काल गणना करने पर यह पाँच सहस्र वर्षों से कुछ अधिक पूर्व हुआ सिद्ध होता है। महाभारत से पुराना ग्रन्थ वाल्मीकि रामायण व इसमें वर्णित इतिहास है जिसकी गणना लाखों व करोड़ों वर्षों में है। कारण यह है कि श्री रामचन्द्र जी त्रेता युग में हुए थे। हमारे देश में सृष्टि का आयुकाल एक हजार चतुर्युगी बताया गया है। एक चतुर्युगी में चार युग सतयुग, द्वापर, त्रेता और कलियुग होते हैं। कलियुग 4 लाख 32 सहस्र वर्षों का होता है। इसका दो गुना अर्थात् 8 लाख 64 सहस्र वर्ष का द्वापर और उससे पूर्व त्रेता युग रहा जिसकी कुल अवधि कलियुग की अवधि की तीन गुना अर्थात् 12 लाख 96 वर्ष का होती है। इस समय सृष्टि सम्वत् 1,96,08,53,116 वां वर्ष चल रहा है। श्री रामचन्द्र जी इस लम्बी अवधि के आरम्भ से लेकर विगत 8.64 लाख वर्ष से पूर्व कभी हुये थे क्योंकि एक चतुर्युगी अर्थात् 43.20 लाख वर्ष के बाद दूसरी फिर तीसरी, इस प्रकार से चारों युग आते व जाते रहते हैं। इन दोनों ग्रन्थों, रामायण व महाभारत, को पढ़ने से एक बात सिद्ध होती है कि उन दिनों देश में सर्वत्र वैदिक धर्म और वैदिक संस्कृति ही विद्यमान थी। राम व रावण तथा अन्य सभी राजा व प्रजाएँ वैदिक धर्मी ही थे। इसी प्रकार से महाभारत में भी सभी राजा व प्रजा वैदिक धर्मी थे। वेद और वैदिक धर्म सृष्टि के आरम्भ से चला आ रहा है। सृष्टि के आरम्भ में ही हमारे सच्चे ब्राह्मणों ने वेदों की रक्षा अपने प्राणों के समान की थी। यही कारण है कि महर्षि दयानन्द को अपने जीवन काल (1825-1883) में वेद अपने मूल रूप में सुरक्षित प्राप्त हुए थे। यह सर्वविदित है कि महाभारत काल के बाद वेदों का सत्यस्वरूप सुरक्षित नहीं रहा। इसके नाम पर अज्ञान के कारण अन्धविश्वास व कुप्रथाओं का प्रचलन हुआ। महर्षि दयानन्द महाभारत काल से अब तक के लगभग 5,100 वर्षों से कुछ अधिक काल में पहले व्यक्ति हुए जिन्होंने वेदों के सत्य अर्थों की खोज की और उपलब्ध व्याकरण के ग्रन्थों के आधार पर तथा अपनी योग की उपलब्धियों का उपयोग कर वेदों में निहित सत्य वेदार्थ को प्राप्त करने में पूर्ण सफलता प्राप्त की। अपने इसी ज्ञान के आधार पर उन्होंने हमें सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ सहित अनेक ग्रन्थ मुख्यतः चारों वेदों की भूमिका एवं वेदों का संस्कृत व हिन्दी भाषा का भाष्य दिया। इनके इस वेदों की व्याख्या के कार्य के लिए संसार की उनके समकालीन व उत्तरकालीन पीढ़ियाँ चिर ऋणी हैं।

हमने यह लेख महर्षि दयानन्द प्रदत्त दृष्टि के अनुरूप वेद के यथार्थ स्वरूप को जानने के लिए लिखा है। महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज की स्थापना 10 अप्रैल, 1875 को मुम्बई में की थी। आर्य समाज के 10 नियम बनाये गये थे, जिनमें तीसरे नियम में कहा गया है कि **वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है तथा वेद का पढ़ना पढ़ाना व सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।** वेद चार मन्त्र संहिताओं ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद को कहते हैं। इन्हें महर्षि दयानन्द ने सब सत्य विद्याओं का ग्रन्थ घोषित किया है। **महर्षि दयानन्द के समय तक विद्यमान किसी पुस्तक को किसी भी विद्वान अथवा किसी मत के अनुयायी ने सब सत्य विद्याओं का ग्रन्थ घोषित नहीं किया था।** उन्होंने वेदों को सब सत्य विद्याओं का पुस्तक होने की घोषणा अपने अपूर्व ज्ञान, विवेक व ऊहा से की थी। महर्षि दयानन्द अपने समय के कोई सामान्य या साधारण विद्वान नहीं थे अपितु वह एक युगपुरुष व संस्कृत विद्या के अपूर्व विद्वान थे। उनका अध्ययन किसी एक पाठशाला या विद्यालय में किन्हीं एक-दो गुरुओं से नहीं हुआ था अपितु देश भर के सभी विद्वानों की संगति कर उन्होंने उनसे अधिकाधिक ज्ञान प्राप्त किया था। वह देश भर में घूम-घूम कर वेदों का प्रचार करते थे तथा वार्तालाप, शास्त्र चर्चा व शास्त्रार्थ भी करते थे। अपने प्रत्येक कथन को वह तर्क, युक्ति, सृष्टिक्रम के अनुकूल, सत्यासत्य की समीक्षा व विश्लेषण कर सिद्ध करते थे। यही पद्धति सत्य के निर्णय करने में आज के युग में अनेक विषयों के विद्वानों व वैज्ञानिकों द्वारा भी अपनाई जाती है। प्राचीन काल से ही वेदों के उपांग के रूप में हमारे पास एक ग्रन्थ न्याय दर्शन है जिसमें किसी विचार या मान्यता को सत्य सिद्ध करने के उपाय बताये गये हैं जो आज भी शत-प्रतिशत प्रासंगिक एवं उपयोगी होने के साथ सारे विश्व का एक मार्गदर्शक है; साथ ही अपने विषय का विश्व के साहित्य में अपूर्व ग्रन्थ है। इस न्याय दर्शन का पूरा उपयोग महर्षि दयानन्द अपने विषय के प्रतिपादन व उसे सत्य सिद्ध करने में करते थे। इसी आधार पर उन्होंने चार वेदों को सब सत्य विद्याओं की पुस्तक सिद्ध किया है।

महर्षि दयानन्द ने देश भर में घूमकर विद्वानों, आचार्यों, योगियों, सन्यासियों, पुस्तकालयों के ग्रन्थों का अध्ययन किया और योग साधना कर सिद्धियाँ व सफलताएँ प्राप्त कीं। इनसे उन्हें ज्ञान, विवेक व ऊहा बुद्धि की प्राप्ति हुई। उन्होंने इस प्रश्न पर भी विचार किया कि मनुष्यों को सृष्टि के आरम्भ में ज्ञान की प्राप्ति किस प्रकार से हुई? वह इस निष्कर्ष पर पहुँचे थे कि मनुष्यों का यह सामर्थ्य नहीं है कि वह ज्ञान व भाषा की उत्पत्ति कर सकें। यह दोनों ही वस्तुएँ उन्हें सृष्टि के आरम्भ में सृष्टि की रचना करने वाले ईश्वर से प्राप्त होती हैं। उन्होंने इस विषय पर गहन अनुसंधान व चिन्तन किया और इससे उन्हें जो बोध हुआ उसे उन्होंने प्रमाणों से सिद्ध किया। इस निष्कर्ष पर पहुँचने व अनुसंधान करने पर उन्हें ज्ञात हुआ कि **ईश्वर से सृष्टि के आरम्भ में प्राप्त ज्ञान व भाषा ही वेद और उसकी भाषा है।** महर्षि के इन निष्कर्षों की पुष्टि अनेक प्राचीन ग्रन्थों में उपलब्ध सन्दर्भों व प्रमाणों से भी होती है। शतपथ ब्राह्मण सृष्टि के आरम्भ में मनुष्यों व ऋषियों द्वारा सबसे प्रथम रचित ग्रन्थ हैं जो वेद व्याख्यान कहलाते हैं। प्राचीन ऋषियों ने चारों वेदों के अलग-अलग ब्राह्मण ग्रन्थ रचे गये। इनसे ज्ञात होता है कि ईश्वर ने सृष्टि के आरम्भ में प्रथम चार ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा को क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद व अथर्ववेद का ज्ञान वैदिक संस्कृत भाषा व इसके अर्थ सहित दिया था। यह सभी ऋषि व स्त्री-पुरुष युवावस्था में उत्पन्न हुए थे। यह सृष्टि व मनुष्योत्पत्ति अमैथुनी सृष्टि कहलाती है। उनका तर्क यह है कि यदि ईश्वर शिशु के रूप में मनुष्यों को जन्म देता तो उनके पालन-पोषण की समस्या थी। और यदि वह वृद्धावस्था में आदि मनुष्यों को जन्म देता तो फिर सन्तानोत्पत्ति न होने से सृष्टि का क्रम आगे न बढ़ता। अतः आदि मनुष्य सृष्टि स्त्री व पुरुषों की युवावस्था में हुई थी और इनकी संख्या शत व सहस्राधिक थी, इससे कुछ अधिक भी हो सकती है। यह सिद्धान्त पूर्णतया अव्यवहारिक है कि सृष्टि के आरम्भ में सर्व प्रथम केवल एक पुरुष व एक स्त्री उत्पन्न हुए। इसमें दोष यह आता है कि उनकी सभी सन्तानें परस्पर भाई व बहिन होंगी अतः माता-पिता व भाई बहिनों से सृष्टि का क्रम आगे नहीं बढ़ सकता और यदि चलेगा तो वह आरम्भ से ही भ्रष्ट होगा। यह वेदों के विरुद्ध होने से स्वीकार करने योग्य नहीं है। ईश्वर के होते हुए ऐसा होना कदापि सम्भव नहीं है।

महर्षि दयानन्द ने वेदों का अध्ययन कर यह भी घोषित किया कि वेद सभी सत्य विद्याओं की पुस्तकें हैं, जिसमें अन्य सभी विषयों की शिक्षा के साथ धर्म की शिक्षा भी सम्मिलित है एवं जो सत्य व तर्क की कसौटी पर खरी हैं। स्वामीजी के अनुसार वेद धर्म का मूल ग्रन्थ है, जिसका उल्लेख मनुस्मृति के वचनों **'वेद अखिलो धर्ममूलम्'** में मिलता है। उनके अनुसार सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उनका आदि मूल ईश्वर ही है। सब सत्य विद्याओं व पदार्थों का आदि मूल ईश्वर होने का कारण ईश्वर का सच्चिदानन्द, निराकार, सर्वज्ञ, सर्वव्यापक, सर्वातिसूक्ष्म, अजन्मा, अनादि, नित्य व स्वयंभू आदि से पूर्ण होना है। यह सारा ब्रह्माण्ड ईश्वर द्वारा मूल प्रकृति से पूर्व कल्पों की भाँति सृजित किया गया है, जिससे ब्रह्माण्ड में विद्यमान अनादि, अनुत्पन्न व नित्य जीवात्माएँ पूर्व कल्प में किये गये अपने शुभाशुभ या पुण्य-पाप कर्मों का सुख वा दुःख के रूप में फल प्राप्त कर सकें और वेद विहित कर्मों को करके मोक्ष अर्थात् दीर्घकाल तक दुखों से निवृत्त रह सकें। उन्होंने यह भी बताया कि दुःखों की निवृति शुभ कर्मों, वेदाध्ययन, मन को नियंत्रित कर योगदर्शन के अनुसार ईश्वरोपासना तथा यज्ञ-अग्निहोत्र आदि करने से होती है। स्वामीजी ने वेदों को ईश्वर का नित्य ज्ञान बताया जो सदा-सर्वदा विद्यमान रहता है और जिसके अवलम्बन में ही मनुष्य जीवन की सफलता का रहस्य छिपा है। वेदों से सम्बन्धित मान्यताओं के आधार पर उन्होंने अपने सभी ग्रन्थों सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका, ऋग्वेद-यजुर्वेद भाष्य, संस्कार विधि, आर्याभिविनय आदि की रचना की। उनके रचे हुए ग्रन्थों से जीवन से जुड़ी हर व्यक्तिगत समस्याओं के समाधान करने के साथ समाज, देश व विश्व की व्यवस्था को सर्वजनहिताय व सर्वजनसुखाय बनाया जा सकता है। स्वामी जी ने देश भर में घूमकर वेदों का प्रचार किया। वेदाध्ययन के लिए संस्कृत की पाठशालाएँ खोलीं और गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का जीवन्त स्वरूप प्रस्तुत किया, जिसका पालन आर्यसमाज के उनके

शेष पृष्ठ 08 पर ☞

सत्य को ग्रहण करना व असत्य को छोड़ना हमारा उद्देश्य

● डॉ. बिजेन्द्र पाल सिंह

भारतीय संस्कृति ही ऐसी है जहाँ सदैव सत्य को महत्व दिया गया है। हमारे महापुरुष सदैव असत्य व सामाजिक बुराइयों को दूर करने में लगे रहे हैं चाहे वह सती प्रथा हो, बलि प्रथा, बाल विवाह अथवा मृतक भोज व श्राद्ध तथा जड़ पूजा आदि हो।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज ने सभी मत मतान्तर वादियों से यही तो कहा कि उनके मतों में जो भ्रान्ति पूर्ण मिथ्या बातें हैं उन्हें निकाल दें और जो सर्वमान्य बातें हैं उन्हें रख लें। यह उन्होंने निष्पक्ष भाव से कहा। सत्यार्थ प्रकाश की भूमिका में ऋषि लिखते हैं कि–

"यद्यपि मैं आर्यावर्त देश में उत्पन्न हुआ हूँ और बसता हूँ तथापि जैसे इस देश के मत मतान्तरों की झूठी बातों का पक्षपात न कर यथातथ्य प्रकाश करता हूँ वैसे ही दूसरे देशस्थ वा मतवालों के साथ भी वर्तता हूँ। जैसा स्वदेश वालों के साथ मनुष्योन्नति के विषय में वर्त्तता हूँ वैसा विदेशियों के साथ भी तथा सब सज्जनों को भी वर्त्तना योग्य है। क्योंकि मैं भी जो किसी एक का पक्षपाती होता तो जैसे आजकल के स्वमत की स्तुति, मण्डन और प्रचार करते और दूसरे मत की निन्दा, हानि और बन्ध करने में तत्पर होते हैं, वैसे मैं भी होता, परन्तु ऐसी बातें मनुष्यपन से बहिः हैं।

भारत में आर्य धर्म के लोपप्रायः हो जाने के पश्चात अज्ञानता के कारण तथा विदेशी आक्रमणों से अनेक कुरीतिया, बुराइयाँ, अन्धविश्वास हिन्दू समाज में फैल गए थे जिसे सामाजिक विकृति मानकर निकालने के प्रयत्न किए गए। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने जीवन भर अंधविश्वास व पाखण्डों को दूर करने हेतु संघर्ष किया, शास्त्र लिखे, उपदेश किए, भारत वर्ष में दूर–दूर तक पैदल यात्राएँ की, शास्त्रार्थ किए, आर्य समाज की स्थापना की जहाँ से वेद प्रचार का कार्य सर्वत्र होता रहे।

अब विडम्बना यह है कि हिन्दुओं (आर्यों) में भी अनेक मत बन गए। आज गुरुडमवाद का अत्यधिक प्रचार व प्रसार हो रहा है जहाँ वेद विरुद्ध मान्यताओं को जनता पर थोपा जा रहा है, भोले भाले अज्ञानी व्यक्ति उनको ही स्वीकार करने लगते हैं क्योंकि वेद उन्होंने पढ़ने तो दूर उनका श्रवण भी नहीं किया। उन्हें तो कान में फूँकने वाले मन्त्र ही चुपके से सुनाए जाते हैं, जबकि वे मन्त्र भी नहीं हैं, ऊट पटांग शब्दों की मिश्रित पंक्तियाँ हैं। विभिन्न मत मतान्तर वालों के अपने–अपने, अलग–अलग भगवान हैं, प्रवर्तक हैं। गुरु अपने आपको भगवान बताते हैं। अपने–अपने मतानुसार अपने भगवानों को चौथे, सातवें आसमान पर, काबा में, कैलाश या बद्रीनाथ, केदार नाथ में बैठा मानते हैं, आबू पर्वत पर स्थित मानते हैं। वेद में जो स्पष्ट सत्य ज्ञान है उससे वह समाज को दूर रखना चाहते हैं अपने अवैदिक मत को चमकाने में लगे हैं वेद का ज्ञान होने पर असत्य व अन्धविश्वास की दुकान चलनी बन्द हो जाएगी। गुरुड़म वाले वेद का नाम इसीलिए नहीं लेना चाहते जिससे उनका अपना मत चलता रहे, परन्तु सत्य यही है कि वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है और हमें सत्य को ही ग्रहण करना चाहिए।

आज हिन्दुओं (आर्यो) में अनेक कुप्रथाओं, कुरीतियों का अन्त हो चुका है। आज कहीं भी सती प्रथा नहीं है। कहीं भी आज बलि नहीं दी जाती। छुट–पुट रूप से कहीं–कहीं अभी बुराइयाँ हैं तो अनेक धार्मिक जन आर्य समाज के साथ उन्हें दूर करने में लगे हैं।

मास मद्य का प्रयोग भी एक भयंकर बुराई है। मांस के लिए भोले–भाले सीधे पशुओं को काट कर आहार बनाया जाता है। भैंस, भेड़, बकरी, ऊँट, बैल, मुर्गा, बटेर आदि अनेक प्राणियों को मौत के घाट उतार दिया जाता है। बकरीद पर नाले व नालियाँ रक्त से लाल हो जाते हैं। वास्तविकता तो यह है कि यह धर्म के कार्य ही नहीं, जीव की हत्या मानवता के विरुद्ध है। धर्म तो वह है कि हम दूसरों के साथ वही व्यवहार करें जैसा हम उनसे अपने लिए चाहते हैं। पशु की हत्या धर्म का कार्य नहीं। हम चाहते हैं कि कोई हमें मारे नहीं, हमारा गला न काटे, अपमान न करें, हमारा मास न खाए तो हम भी किसी को न मारें, न काटें, न ही खाएँ। हम यदि अपने लिए पशुओं की कुर्बानी करते हैं, बलि चढ़ाते हैं तो यह मानवता नहीं है, न ही ईश्वरीय है। किसी जीव की हत्या और पशु जो उपयोगी हैं हमें किसी प्रकार से हानि भी नही पहुँचाते उनको तो मारना ही नहीं चाहिए। हिन्दू हो या मुसलमान, ईसाई हों या अन्य, हमें जीवों पर मानवता के नाते से दया करनी चाहिए। पशुहत्या, बलिप्रथा पर यदि हिन्दुओं (आर्यों) में रोक लगायी जा रही है तो अन्य मतों में भी ऐसी कुप्रथाओं व बुराइयाँ पर रोक लगानी चाहिए।

अनेक कुप्रथाएँ समाज मैं आज भी हैं। जादू टोना, तांत्रिक कर्म, देवी जागरण, दहेज प्रथा, मृतक श्राद्ध, काँवड़ लाना, जड़ पूजा, केदारनाथ, बद्रीनाथ यात्रा आदि अवैदिक कर्म हैं।

हमारे यहाँ अब भी अनेक स्थान ऐसे हैं जहाँ भूत–प्रेत व भटकी आत्मा को भगाने के नाम पर झाड़ फूँक की जाती है, गण्डा व ताबीज़ बांधे जाते हैं। पाखण्डी अंधविश्वासी लोग इनके चंगुल में फँस कर धन व समय को व्यर्थ गँवाते हैं। यही नहीं इसके अतिरिक्त और भी अनेक कुप्रथाएँ हैं– जो हमारे समाज में आती रहीं हमने विरोध किया और समाज से उन्हें निकाल दिया।

सतीप्रथा ऐसी ही एक कुप्रथा थी जो कि वेद विरुद्ध थी, समाज की बुराई थी। पति की मृत्यु पर उसकी पत्नी को भी जीवित ही चिता पर रख कर जला दिया जाता था। राजा राम मोहन राय ने लार्ड बैन्टिक द्वारा इस प्रथा पर रोक लगायी।

विधवा प्रथा भी ऐसी ही बुराई थी। स्त्री के पति की मृत्यु होने के पश्चात स्त्री को घोर नारकीय जीवन जीना पड़ता था, उसका सिर तक मुँड़वा दिया जाता था, वह श्वेत वस्त्र पहनती थी, कोई उसे देखना तक उचित नही समझता था, सामने आना भी बुरा मानते थे। आर्य समाज ने इसका विरोध किया। ऋषि दयानन्द ने विधवा के पुनर्विवाह पर बल दिया और स्त्री को पुनः विवाह करने का रास्ता खोल दिया। यह समाज में विडम्बना ही थी कि पति की मृत्यु हो जाए तो पत्नी जीवन भर अकेली ही रहेगी और पत्नी की मृत्यु हो जाए तो बूढ़े पुरुष तक अपना विवाह कर लेते थे। आर्य समाज ने इस कुप्रथा का विरोध किया।

बाल विवाह भी भारत में एक कुप्रथा थी। छोटे–छोटे बालकों का विवाह कर दिया जाता था। उन्हें यह भी पता न होता था कि विवाह क्या होता है? इसका कारण यह भी रहा होगा कि कन्या के कुछ बड़ा होते ही यवन लोग उसे उठा ले जाते थे क्योंकि यहाँ मुगल, पठान, तुर्की का तलवार पर शासन चलता था। पाकिस्तान में ऐसा देखने में आया है वहाँ गैर मुस्लिमों के साथ इसी प्रकार करते हैं। बाल विवाह पर रोक लगायी। पर्दाप्रथा भी विदेशियों के आक्रमण व जुल्मों के कारण भारत में आई जबकि पर्दा प्रथा भारत की संस्कृति नहीं थी हमारे यहाँ गार्गी, मैत्रेयी, मदालसा जैसी विदुषी नारियाँ हुयी हैं जिन्हें पुरुषों की भांति जीवन यापन की स्वतन्त्रता थी, कोई बन्धन नही था। भारत में पर्दाप्रथा को आर्य समाज ने दूर किया।

अशिक्षा उन्नति में बाधक रही। स्त्रियों को पढ़ना–पढ़ाना मना था। स्त्री व शूद्र को वेद पढ़ना भी मना था। यदि शूद्र वेद पढ़ता मिल जाए तो कानों में रांगा पिघला कर डालने का आदेश था। आर्य समाज ने स्त्रियों के लिए विद्यालय खोले और वहाँ कन्याओं को पढ़ाने के लिये प्रोत्साहित किया। आज भारत में छात्राएँ, शिक्षा में छात्रों से आगे हैं और राजकीय संस्थानों, व्यापार, उद्योग, समाज, रक्षा, सुरक्षा, न्याय आदि महत्वपूर्ण विभागों में महत्वपूर्ण पदों पर हैं।

छुआछूत व ऊँच–नीच, जातिवाद का बीज भी भारत में वेद की शिक्षा कम होने व विदेशी आक्रमणों के कारण हुआ। जब वेदादि शास्त्रों का पढ़ना–पढ़ाना कम हो गया, धन की कोई कमी न थी, लोगों में ईर्ष्या द्वेष की भावना व धन की अधिकता से प्रमाद बढ़ कर लड़ाई झगड़े बढ़ गए। पूरा समाज जातिवाद ऊँच–नीच में बँट गया। छुआछूत मिटाई, अछूतों को गले लगाया, समाज को बता दिया कि ये भी समाज के अभिन्न अङ्ग हैं। यह समाज की नींव हैं, समाज का बोझ ही इनके कन्धों पर है। आज अस्पृश्यता का रोग बहुत कम है, शिक्षित लोगों में यह रोग नहीं है। प्रत्येक विभाग में अस्पृश्य समझे जाने वाले लोग सबके साथ रहते व कार्य करते हैं।

बहुदेवतावाद की समस्या हमारे समाज में बहुत अधिक थी। आर्य समाज ने ही बताया कि माता–पिता आचार्य देवता हैं, पूजनीय हैं। पति के लिए पत्नी व पत्नी के लिए पति सम्माननीय होता है। आर्य समाज ने ही बताया कि ईश्वर एक ही है, सर्वशक्तिमान, निराकार, अजन्मा है उसकी कोई मूर्ति नहीं। समस्त देवों का वही देव महादेव है। गणेश, महेश, विष्णु, ब्रह्मा आदि नाम उस एक परमात्मा के ही हैं। पौराणिकों ने इन सभी नामों से अलग अलग देवता मान लिए व पूजा अर्चना करने लगे।

आर्य संस्कृति में जो कुरीतियाँ समाज में आती रहीं उनको दूर करने के पूरे प्रयास किए गए। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज ने जातिवाद, ऊँच–नीच, छुआ–छूत जैसे सामाजिक रोगों को दूर करने का क्रान्तिकारी कार्य किया। आर्यसमाज स्थापित किए और जो लोग वेदों को भूल गए थे, उनके लिए पुनः वेद का प्रकाश किया। भारत के गौरव के विषय में प्रकाश किया और बताया कि वैदिक ज्ञान पर चल कर ही यहां चक्रवर्ती शासक हुए। आज हमें भी वेदों की ओर चलना चाहिए जहाँ से सत्य को ग्रहण करने व असत्य को छोड़ने की शिक्षा मिलती है।

चन्द्र लोक कालोनी
खुरजा–203131
मो. 8979794715

वेद के ईश्वरीय ज्ञान होने में कुछ प्रमाण

● खुशहाल चन्द्र आर्य

वेद ईश्वरीय–ज्ञान है, इसके निम्नलिखित प्रमाण हैं :–

1. सृष्टि और वेदों में एकता : – सृष्टि में हम जो कुछ देखते हैं, वैसा ही वेदों में लिखा हुआ है। जब सृष्टि ईश्वर ने बनाई है तो इससे सिद्ध होता है कि वेद भी ईश्वर के ही बनाए हुए हैं। यदि वेद ईश्वर के बनाए हुए नहीं होते तो सृष्टि भी वेदों के अनुसार नहीं होती। जब सृष्टि में और वेदों में एक रुपता है तो इससे सिद्ध होता है कि दोनों चीजें किसी एक की ही बनाई हुई हैं। अब प्रश्न उठता है कि सृष्टि भी ईश्वर ने नहीं बनाई, ईश्वर ने बनाई। इसका क्या प्रमाण है? इसका उत्तर यह है कि जीव की क्षमता ही नहीं कि वह सृष्टि बना सके। सृष्टि बनाने के लिए सर्वव्यापक, सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान का होना जरुरी है। जीव अल्पज्ञ है, एक स्थानीय है और सीमित शक्ति वाला है इसलिए जीव सृष्टि नहीं रच सकता। ये तीनों गुण ईश्वर में हैं इसलिए सृष्टि ईश्वर ने रची है। सृष्टि जड़ है यानि अचेतन है तब भी सृष्टि किसी नियम के अनुसार चलती है। जैसे सूर्य समय पर उगता है और समय पर छिपता है। पृथिवी सूर्य के चारों तरफ घूमती है, स्वयं भी अपनी परिधि में घूमती है और चन्द्रमा पृथिवी के चारों तरफ परिक्रमा करता है। जड़ वस्तु में स्वयं में बनने की शक्ति नहीं होती। उसको बनाने के लिए या चलाने के लिए किसी चेतन बुद्धिमान् की आवश्यकता होती है। नियम पूर्वक चलने वाली सृष्टि का कोई नियामक (नियम से चलाने वाला) अवश्य होना चाहिए। इससे सिद्ध होता है कि सृष्टि का नियामक ईश्वर है।

2. वेदों में जीव के लिए पूर्ण ज्ञान है : – वेदों में मनुष्य को जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त उसको क्या काम करने चाहिए और क्या काम नहीं करने चाहिए सब लिखा है। जीव का मुख्य लक्ष्य मोक्ष पाना है जो मनुष्य योनि मे ही सम्भव है। मनुष्य के लिए चार पुरुषार्थ निर्धारित किए गए है। वे है– धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष/ धर्म, अर्थ और काम को धार्मिक भावना के साथ कर्त्तव्य भाव से करने से मोक्ष की प्राप्ति होती है। मनुष्य को कैसे जीना चाहिए जिससे वह मोक्ष प्राप्त कर सकें, यह सब ज्ञान वेदों में है, यानि वेद पूर्ण ज्ञान के भण्डार हैं। पूर्ण ज्ञान वही दे सकता है जो स्वयं में पूर्ण होगा। जीव अल्पज्ञ है वह वेद ज्ञान नही दे सकता। ईश्वर पूर्ण है उसी ने वेद–ज्ञान दिया है। पूर्ण ईश्वर का दिया हुआ ज्ञान भी पूर्ण होगा। इसलिए वेद ज्ञान भी अपने आप में पूर्ण है जो ईश्वर से आदि सृष्टि में मनुष्य उत्पत्ति के साथ ही चार ऋषियों द्वारा, जिनके नाम अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा थे, उनके मुखों से चार वेद–ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद व अथर्ववेद क्रमशः उच्चारित करवाए। पूर्ण का ज्ञान भी पूर्ण होता है इसलिए वेद–ज्ञान भी पूर्ण है।

3. वेदों में किसी के प्रति कोई भेद–भाव नहीं :– ईश्वर ने वेद–ज्ञान केवल मानव–मात्र ही नहीं बल्कि प्राणी –मात्र के कल्याण के लिए दिया है। ईश्वर सब जीवों को उनके कर्मानुसार योनियों में भेजता है इसलिए ईश्वर सब का पिता हुआ और सब जीव उसके पुत्र हुए। कोई भी पिता अपने पुत्रों में कोई भेद–भाव नहीं रखता। सब के कल्याण की सोचता है इसलिए ईश्वर भी सब जीवों के कल्याण की सोचता है। वेदों में सभी जीवों के कल्याण व उपकार की बातें हैं इसलिए सिद्ध होता है कि वेद का ज्ञान ईश्वर का दिया है। भाई यदि किसी मनुष्य का दिया हुआ होता तो उसमें भेद–भाव होता, कारण, मनुष्य अल्पज्ञ है वह अपनों का कल्याण व उपकार करना चाहता हैं, सबका नहीं।

4. वेदों के सभी मन्त्र बहुवचन में हैं :– वेद पूरे मानव–मात्र के हैं इसलिए उनके सभी मन्त्र बहुवचन में हैं। यदि किसी एक देश या समुदाय का होता तो एक वचन में होता। वेदों के सभी मन्त्र ईश्वर को सम्बोधित करके लिखे गए हैं। इसलिए वेद, ईश्वर के द्वारा बनाए हुए हैं। उदाहरण के लिए दो मन्त्र, अर्थ सहित यहाँ लिखे जाते हैं–

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव।
यद् भद्रं तन्न आसुव।
यजु. अ. 30। मन्त्र 3।।

अर्थ :– हे सकल जगत् के उत्पत्तिकर्त्ता, समग्र ऐश्वर्य युक्त, शुद्ध स्वरूप, सब सुखों के दाता परमेश्वर! आप कृपा करके हमारे सम्पूर्ण दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुःखों को दूर कीजिए और जो कल्याण–कारक गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थ है, वह सब हमको प्राप्त कीजिए।

दूसरा मन्त्र :–

ओ३म् स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा।
यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त।।

यजु. 32/ म. 20।।

अर्थ :–हे मनुष्यों! वह परमात्मा अपने लोगों का भ्राता के समान सुखदायक, सकल जगत् का उत्पादक, वह सब कार्यों को पूर्ण करने हारा, सम्पूर्ण लोक–मात्र और नाम, स्थान, जन्मों को जानता है और जिस सांसारिक सुख–दुःख से रहित नित्यानन्दयुक्त, मोक्ष स्वरुप धारण करने हारे परमात्मा में मोक्ष को प्राप्त हो के विद्वान् लोग स्वेच्छा पूर्वक विचरते हैं, वही परमात्मा अपना गुरु, आचार्य, राजा और न्यायाधीश है। अपने लोग मिल के सदा उसकी भक्ति किया करें।

इन दो मन्त्रों से यह सिद्ध हो गया है कि वेदों के सभी मन्त्र बहुवचन में है और ईश्वर को ही सम्बोधित किया गया है। इसलिए वेद ईश्वर की ही रचना है।

180 महात्मा गाँधी रोड़
(दो तल्ला) कोलकाता–700007
फोन :– 9830135764

☞ पृष्ठ 06 का शेष

ईश्वरीय ज्ञान वेद के...

अनुयायियों ने किया। आज आर्य समाज द्वारा देश भर में लगभग 500 गुरुकुलों का संचालन किया जा रहा है। स्वामी जी संस्कृत भाषा के अध्ययन के पक्षधर थे जिससे वेद एवं वैदिक साहित्य सुरक्षित रहें और इससे मानव जाति को इनका लाभ मिलता रहे। संस्कृत के बाद वह हिन्दी को सर्वाधिक महत्व देते थे और इन दोनों भाषाओं के बाद वह संसार की अन्य सभी भाषाओं को आवश्यकतानुसार सीखने और प्रयोग में लाने के प्रति उदार थे। विज्ञान व तकनीकी का भी वह सम्मान करते थे और देश में विज्ञान व तकनीकी का प्रयोग तथा इनके अध्ययन के लिए उन्होंने प्रयास किये थे। संक्षेप में कह सकते हैं कि वह स्वदेशी की भावना के साथ सभी मनुष्यों के श्रेष्ठ गुण, कर्म व स्वभाव युक्त आचरण के पक्षधर थे, जिसका मार्गदर्शक वेद व वैदिक साहित्य की तर्क व युक्ति प्रमाणों से सिद्ध शिक्षाएँ थीं। उनके जीवन व साहित्य से जीवन की सभी समस्याओं का समाधान सम्भव है।

लेख को विराम देने से पूर्व यह जानना उचित होगा कि महर्षि दयानन्द के कार्य क्षेत्र में पदार्पण करने के समय सन् 1863 ई. में वेद विलुप्ति के कगार पर थे। वेद के सत्यार्थ तो विगत पाँच हजार वर्षो से ही विलुप्त थे परन्तु वेदों की संहिताएँ व पोथियाँ भी आसानी से उपलब्ध नहीं थीं क्योंकि भारत में इनका किसी प्रेस या मुद्रणालय से प्रकाशन नहीं हुआ था। हमारे पौराणिक सनातन धर्मी बन्धुओं को वेद की किंचित चिन्ता नहीं थी। वेदों के संरक्षण व प्रचार में उनकी कोई रुचि नहीं थी यद्यपि वह भी वेदों को ईश्वरीय ज्ञान मानते हैं। उन्होंने तो ईश्वरीय ज्ञान वेदों का स्थान मनुष्यकृत ग्रन्थों पुराणों, गीता व रामचरित मानस आदि ग्रन्थों को दे दिया था, जिनमें वैदिक सिद्धान्तों के विरुद्ध अनेक बातें थीं। हमें आश्चर्य होता है कि काशी विद्वानों की नगरी थी और वहाँ भी वेदों का पठन–पाठन समाप्त हो चुका था। ऐसी विपरीत परिस्थितियों में महर्षि दयानन्द ने वेदों की खोज की और उन्हें प्राप्त कर उनके सत्य अर्थो पर विचार व चिन्तन कर अपने योग व विद्या बल से वेदों के सत्य अर्थों को जानने में सफलता प्राप्त की। उन्होंने वेदों के सत्य अर्थ भी किए और उनके प्रकाशन का कार्य भी किया। आज भारत में वेद सत्य अर्थों से युक्त अपने यथार्थ स्वरुप के साथ उपलब्ध हैं। इसका सारा श्रेय महर्षि दयानन्द व उनके आर्यसमाज के अनुयायी विद्वानों को है। पौराणिक बन्धुओं ने वेदों के सरंक्षण में जो उपेक्षा की वह अत्यन्त दुःखद है। इस कार्य के लिए देश व विश्व की सारी जनता महर्षि दयानन्द की आभारी है। लेख की समाप्ति पर संक्षेप में इतना कह सकते हैं कि वेद व वैदिक साहित्य के अध्ययन से जीवन अभ्युदय व निःश्रेयस को प्राप्त होता है। इनकी प्राप्ति का अन्य कोई मार्ग, पथ व जीवन पद्धति नहीं है। इन्हीं शब्दों के साथ इस लेख को विराम देते हैं।

पताः 196 चुक्खूवाला–2
देहरादून–248001
फोन:09412985121

महर्षि दयानन्द और धार्मिक सुधार

● डॉ. आर्येन्दु द्विवेदी

समाज को विकसित और सुव्यवस्थित रखने में धर्म का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। धार्मिक प्रेरणा से समाज के लोग सत्कर्मों की ओर उन्मुख होते हैं तथा जिस समाज में सत्कर्मों का बाहुल्य होगा वह समाज अपने-आप में आदर्श होगा।

उन्नीसवीं शती में हिन्दू धर्म अपने वास्तविक उद्देश्य, सच्चे ध्येय और कर्त्तव्यों से दूर हट गया था, उसका वास्तविक स्वरूप लुप्त हो गया था। समाज धार्मिक रूढ़ियों, विश्वासों से ग्रस्त हो गया था। धार्मिक क्षेत्र में बहुदेववाद, अवतारवाद, मूर्तिपूजा, जादू-टोना आदि धार्मिक अनुष्ठान प्रचालित हुए। तीर्थस्थल व्यभिचार के अड्डे बने हुए थे। इसी समय हिन्दू समाज पर इस्लाम और ईसायत के अघात लग रहे थे।

ऐसे समय में स्वामी दयानन्द का प्रादुर्भाव हुआ। स्वामी दयानन्द द्वारा प्रतिपादित नयी धार्मिक चेतना समयानुकूल थी। स्वामी जी ने निराश हिन्दू जनता को नवजीवन प्रदान किया एवं शारीरिक नैतिक तथा आध्यात्मिक पक्षों के विकास का प्रतिपादन किया। तत्कालीन समाज में व्याप्त पौराणिक मान्यताओं का खण्डन किया। स्वामी दयानन्द ने वैदिक धर्म को सच्चा धर्म माना तथा वैदिक धर्म की पुनः प्रतिष्ठा पर बल दिया।

स्वामी दयानन्द केवल एक ईश्वर की उपासना के समर्थक थे और वेदों पर आधारित निराकार ईश्वरोपासना को समाजोपयोगी बताया। स्वामी दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में सौ नाम परमेश्वर के बताए हैं। स्वामीजी ने सबसे प्राचीन और पवित्र वेदों में प्रतिपादित ऐकेश्वरवाद की पूजा के लिए समाज को प्रेरित किया। स्वामी दयानन्द की मान्यता है कि परमेश्वर, निराकार और सर्वव्यापक है। अतः उसकी मूर्ति नहीं बनायी जा सकती। आर्यसमाज ने ईश्वर को निराकार और सर्वव्यापक माना है।

स्वामी दयानन्द ने वेदशास्त्रों में प्रतिपादित सत्यज्ञान को साधारण भाषा में जनता सम्मुख रखकर एक नये युग का सूत्रपात किया। माता-पिता, आचार्य, एवं अपनी सन्तान और शिष्यों को सत्य का उपदेश करने एवं धर्मयुक्त कार्यों को ग्रहण करने की सलाह दी। स्वामी जी ने सत्य का प्रकाश एवं प्रचार करने पर बल दिया। सत्यभाषण में ही धर्म और असत्यभाषण में अधर्म निहित होता है। स्वामी दयानन्द ने व्यवहारभानु में लिखा है कि मनुष्य में मनुष्यपन यही है कि सर्वथा झूठे व्यवहारों को छोड़कर सत्य व्यवहारों को सदैव ग्रहण करना चाहिए।

स्वामी दयानन्द ने मद्यपान, माँसभक्षण तथा पशु हिंसा को अनुपयोगी एवं रोग उत्पन्न करने का कारण माना और अहिंसा का समर्थन किया। मनु का कथन है कि मारने की अनुमति देने वाला, काटने वाला, विक्रेता, क्रेता, पकाने वाला, परोसने वाला और खाने वाला ये चार घातक हिंसक और पापी माने जाते हैं। स्वामी दयानन्द ने मनुष्यों से पशुओं की हत्या न करने की तथा उनकी रक्षा तन, मन, धन से करने की अपील की थी। गोरक्षा के सम्बन्ध में स्वामी दयानन्द के विचार वैदिक धर्म के महत्वपूर्ण अंग हो तथा आर्यसमाज ने निरन्तर इसके लिए महत्वपूर्ण प्रयास किया। स्वामी दयानन्द की 1881 में ''गोकरूणानिधि'' प्रकाशित की थी। इस पुस्तक को लिखने का उद्देश्य गौ आदि पशुओं को सामर्थ्य के अनुसार बचाना एवं दूध, घी और खेती में वृद्धि करना था। स्वामी जी के अनुसार दूध एवं अन्न दोनों की गणना करके गाय की एक पीढ़ी में 4,75,600 मनुष्य पालित होते हैं और पीढ़ी दर पीढ़ी यह प्रक्रिया जारी रहती है तो असंख्य मनुष्यों का पालन हो सकता है। इसके विपरीत एक गाय मारने से केवल 80 व्यक्ति तृप्त हो सकते हैं। यजुर्वेद में 'गां मा हिंसी' (13/43) में गौहिंसा न करने पर बल दिया गया है। गौरक्षा हेतु स्वामी दयानन्द एवं आर्यसमाज द्वारा अनेक प्रयास किए गए।

स्वामी दयानन्द ने गोवध एवं पशु हिंसा निषेध के साथ-साथ मांस भक्षण एवं मद्यपान रोकने हेतु बल दिया। स्वामी जी ने मांसभक्षण को अधर्म माना है। मांसभक्षण मद्यपान करने तथा परस्त्रीगमन को समाज के लिए हानिकारक माना हैं। क्योंकि बिना प्राणियों को पीड़ा दिए मांस प्राप्ति नहीं होती। अतः बिना अपराध के पशुओं को पीड़ा देना अधर्म है।

स्वामी दयानन्द ने गोरक्षा, मांसाहार एवं मद्यपान के सन्दर्भ में जो विचार व्यक्त किए हैं वह वर्तमान युग में प्रासंगिक हैं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती के धार्मिक सुधारों तथा नैतिक नियमों के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि स्वामी दयानन्द न केवल उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में व्याप्त कुरीतियों को निराकरण करना चाहते थे, अपितु वे पुरातन वैदिक मूल्यों और संस्थाओं की पुनः स्थापना करना चाहते थे। आर्यसमाज ने उनके धार्मिक एवं सामाजिक सुधारों को मूर्तरूप प्रदान किया। स्वामी दयानन्द ने निराकार तथा ऐकेश्वरवाद का समर्थन किया। स्वामी दयानन्द ने मद्यपान, मांसभक्षण एवं पशुहिंसा का विरोध किया। गौरक्षा के लिए आन्दोलन चलाया। अन्धविश्वास, मुर्तिपूजा का विरोध, गोहत्या निषेध, अहिंसा, ऐकेश्वरवाद, निराकार ब्रह्म की पूजा आदि के द्वारा उन्होंने भारतीय समाज में तार्किकता एवं विवेकशीलता को रोपित करने का प्रयास किया।

एसोसिएट प्रोफेसर समाज शास्त्र,
राजकीय महाविद्यालय,
कैम्पियर गंज, गोरखपुर

☞ *पृष्ठ 02 का शेष*

अमृत-पान ...

आध्यात्मिक कङ्गाल

कपिल वस्तु के विशाल नगर में महात्मा बुद्ध भिक्षा-पात्र हाथ में लिए हुए भिक्षा माँगने के लिए चक्कर लगा रहे थे। सारे नगर में यह समाचार अग्नि की भाँति फैल गया कि राजकुमार सिद्धार्थ (महात्मा बुद्ध) जो इस नगर में सुन्दर और बहुमूल्य, सजे हुए रथों में सवार होकर निकला करते थे, अब घर-घर जाकर भिक्षा माँग रहा है। उसके हाथ में मिट्टी का भिक्षापात्र है। बुद्ध का पिता यह समाचार सुनते ही बुद्ध के पास पहुँचा। उसे ऐसा करने से रोकने के लिए वह उसे अपने महल में ले गया।

महल में जाते ही बुद्ध ने कहा- "महाराज! यह एक प्रथा है कि जब किसी को कोई गुप्त कोश मिलता है- छिपा हुआ धन मिलता है, तब वह उसमें से सबसे बहुमूल्य रत्न अपने पिता के सामने उपस्थित करता है। आज्ञा दो कि मैं अपने कोश (ख़जाने) को आपके समक्ष खोल दूँ, जो धर्म का कोश है और ये जवाहरात आप मुझसे स्वीकार कर लें।" तब बुद्ध ने अपने पिता को गुप्त कोश प्रदान किया। इतिहास बताता है कि राजा ने इसे स्वीकार किया। सारा वंश-का-वंश बुद्ध का शिष्य बन गया और उसके मत को स्वीकार कर लिया।

परन्तु कितनी उलटी रीति है, कितना उलटा चलन है कि आज आर्य-पिता अपने पुत्र को आर्यधर्म का-वैदिक धर्म का कोश नहीं देता। हम देखते हैं कि आर्यपिताओं के पुत्र आर्यधर्म के कोश से रिक्त (खाली, शून्य) होते हैं, जिसके कारण आध्यात्मिक कङ्गाली उन्हें अन्तिम सीमा तक सताती है और उनके पतन का कारण बनती है।

बुद्ध ने अपने पिता को धार्मिक कोश देकर उन्हें मालामाल कर दिया, परन्तु हाय! आज के आर्य विनाश लानेवाली सम्पत्ति तो बच्चों को उत्तराधिकार में दे देते हैं, परन्तु आर्यधर्म की सम्पत्ति उन्हें नहीं देते। क्या पता यह सम्पत्ति स्वयं उनके पास नहीं है अथवा वे जानबूझकर अपने बच्चों को इस सम्पत्ति से वञ्चित रखते हैं। यह दृश्य अत्यन्त हृदयवेधक है। आर्य माता-पिता आज इसपर विचार करें और अपने बच्चों को आर्यधर्म के कोश से वञ्चित करके इन्हें आध्यात्मिक कङ्गाल न बनाएँ। सांसारिक निर्धनता निःसन्देह कष्ट देती है और मनुष्य को गिरा देती है, परन्तु आध्यात्मिक कङ्गाली ऐसा गिराती है कि फिर मनुष्य को कहीं का नहीं रखती। सांसारिक कङ्गाली भूखों मारती है और आध्यात्मिक कङ्गाली मानवीय शक्ल को दूर करके पाशविक और दानवी शक्ल ले-आती है। इस रहस्य को समझो और अपनी सन्तान को आध्यात्मिक कङ्गाल मत बनाओ।

.... **क्रमशः**

पत्र/कविता

फिर हर कोई भूल जाता है

हमारे प्रदेश में जैसे ही
हाई स्कूल और हायर सैकिन्ड्री बोर्ड के
नतीजे आते हैं वैसे ही बच्चों द्वारा
आत्महत्याओं का क्रम शुरू हो जाता है।
कितना दुखद है यह नित बढ़ता सिलसिला?
कुछ दिन बयानबाज़ी होती है और
फिर हर कोई भूल जाता है इसे।
फेल होने वाले ही यह कदम नहीं उठाते
उम्मीद से कम अंक पाने वाले भी
अपनी जान देने में देर नहीं लगाते।
मां बाप, शिक्षक, समाज कोई भी क्यों
इस प्रवृत्ति को गंभीरता से नहीं लेता?
क्यों नहीं नादान बच्चों को यह समझाया जाता
कि पास फेल से अधिक कीमती है तुम्हारी जान।
मां बाप भाई बहन पूरे परिवार के लिए
कितना बड़ा, कितना दुखद होता है यह सदमा?
सरकार का दायित्व भी बतलाने की
आवश्यकता है क्या इस सिलसिले में?

ओमप्रकाश बजाज, पोस्ट बाक्स 595,
जी.पी.ओ.इंदौर (म.प्र.) 452001
मो: 09826496975

यह है हमारी तीर्थ यात्रा

'मधुर! वैषणो देवी की यात्रा कैसी रही'? माँ ने पूछा? मधुर : कैंसिल कर दिया है कार्यक्रम। कुछ पुरानी गलतियाँ सुधारी हैं।

दोनो बच्चों को एक ही कमरे में एडजस्ट कर दिया है। माँ! आप अब गैरेज के बजाय कमरे में सोयेंगी। आपका चश्मा टूट गया है चलो नया बनवा दें।

मोटे अक्षरों वाली गीता, रामायण लाये हैं। अब हम आपके साथ दोनों समय खाना खायेंगे। और अब बाकी खाना महरी को दे देंगे। आपके लिए कमरे में ए.सी भी लगा दिया है। एक काम वाली आपके पास दिन भर रहेगी। यह है हमारी तीर्थ यात्रा!

कृष्ण मोहन गोयल
अमरोहा

****

मोदी की ऐतिहासिक इस्राइल-यात्रा

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की यह इस्राइल–यात्रा ऐतिहासिक रही। ऐतिहासिक इसलिए कि जिस देश के साथ पिछले 70 साल से हमारे खुले और गोपनीय संबंध रहे हैं, वहाँ जाने की हिम्मत पहली बार किसी प्रधानमंत्री ने की है तो वह मोदी ने की। मोदी के पहले पी.वी. नरसिंहराव ने भी इस्राइल–यात्रा का विचार किया था लेकिन 25 साल पहले के भारत और दक्षिण एशियाई राजनीति का चरित्र कुछ ऐसा था कि राव साहब इस्राइल न जा सके लेकिन उन्होंने इस्राइल को राजनयिक मान्यता देकर भारतीय विदेश नीति के इतिहास में नया अध्याय लिखा। मोदी के इस साहस की सराहना करनी होगी कि उन्होंने सारी झिझक छोड़कर इस्राइल–यात्रा का निर्णय किया। मोदी का यह कदम नरसिंहराव जी की नीतियों को तो शिखर पर पहुँचा ही रहा है, उसके साथ–साथ संघ और जनसंघ की इस्राइल–नीति को भी अमली जामा पहना रहा है।

इस्राइल से संकोच करने के पीछे दो तर्क काम कर रहे थे। एक तो भारत के मुसलमानों का नाराज़ होना और दूसरा अरब देशों से हमारे संबंधों में तनाव पैदा होना! वास्तव में ये दोनों तर्क बोगस हैं। भारत के मुसलमानों का इस्राइल से क्या लेना–देना है? वहाँ जो झगड़ा है, वह इस्लाम और यहूदीवाद के बीच नहीं है। वह मामला धार्मिक नहीं है बल्कि क्षेत्रीय है। धर्म का नहीं है, जमीन का है। फिलीस्तीनी लोग कट्टरपंथी इस्लाम को नहीं मानते और इस्राइल की स्थापना करनेवाले कुछ बड़े नेता कम्युनिस्ट थे।

भारत के मुसलमान कश्मीरी मुसलमानों का भी समर्थन नहीं करते तो वे फिलीस्तीनियों के लिए क्यों परेशान होंगे? इसी प्रकार अरब राष्ट्रों के अपने स्वार्थ हैं। यदि वे इस्राइल से अच्छे संबंध बनानेवाले राष्ट्रों से दुश्मनी करने लगें तो उनका जीना हराम हो जाएगा। अमेरिका तो इस्राइल का सबसे बड़ा संरक्षक है। फिर भी सउदी अरब, जोर्डन, कुवैत, कतर, संयुक्त अरब अमारात आदि ने अमेरिका के साथ घनघोर घनिष्टता क्यों बढ़ा रखी है? इसीलिए इस्राइल से सीधे संबंध बढ़ाने में भारत का डर निराधार था।

इस्राइल ने मोदी का स्वागत पोप की तरह क्यों किया? जाहिर है कि इस्राइल के 41 प्रतिशत हथियारों की खरीद भारत करता है। भारत उसका सबसे बड़ा हथियारों का खरीददार है। अब दोनों के बीच 17 हजार करोड़ रु. के सौदे होने हैं। ट्रंप भी मोदी से तीन बार गले मिले और बेंजामिन नेतन्याहू से भी! मोदी इन नेताओं से गले नहीं मिलते तो भी ट्रंप और नेतन्याहू मोदी के गले पड़ते। इस्राइल अपना फायदा देख ही रहा है लेकिन भारत का फायदा भी कम नहीं है। इस्राइल से भारत को ताजातरीन हथियार तो मिलेंगे ही, आतंकियों की कमर तोड़ने की रणनीति भी मिलेगी, खेती, सिंचाई, जल–रक्षा आदि के क्षेत्र की दुर्लभ तकनीकें भी भारत को सुलभ हो जाएँगी। इस्राइल से भारत की घनिष्टता का यह अर्थ नहीं कि फिलीस्तीनियों के प्रति भारतीय नीति में कोई बुनियादी परिवर्तन होगा। वास्तव में भारत–इस्राइल घनिष्टता फिलीस्तीनी समस्या का हल करने में सहायक भी हो सकती है।

डॉ. वेद प्रताप वैदिक

****

जागो और जगाओ

खंडित भारत में भी, हिन्दू का प्रतिशत, लगातार घट रहा है। 1881–1941–60 वर्षों में हिन्दू का प्रतिशत 80 से घटकर 74 रह गया था। विभाजन के बाद 1947–2017 में (70 वर्षों में) हिन्दू का प्रतिशत फिर घटकर 88 से 80 प्रतिशत रह गया है। गिरावट को रोकने के लिए सभी दल कुछ भी करने को तैयार नहीं हैं।

ऐसी विचित्र स्थिति में, इस गिरावट को रोकने के लिए चीन जैसा परिवार नियोजन का सख्त कानून बनवाना अपेक्षित है जो सभी पर लागू हो। कृपया तन–मन–धन से सहयोग व समर्थन करें। इसलिए जागो और जगाओ

आई.डी.गुलाटी
18/186 टीचर्स कालोनी
बुलन्दशहर (उ.प्र.)
203001

****

तीन प्रकार के कर्म

जो मन, इन्द्रिय और शरीर में जीव चेष्टाविशेष करता है, वह 'कर्म' कहाता है। यह शुभ, अशुभ और मिश्र भेद से तीन प्रकार का है।

1) **क्रियमाण कर्म** :– जो वर्त्तमान में किया जाता है, सो 'क्रियमाण कर्म' कहाता है।

2) **सञ्चित कर्म** :– जो क्रियमाण का संस्कार ज्ञान में जमा होता है (वे) 'सञ्जित' संस्कार (कर्म) कहाते हैं।

3) **प्रारब्ध कर्म** :– जो पूर्व किये हुए कर्मों के सुखदुःखस्वरूप फल का भोग किया जाता है, उसको 'प्रारब्ध' कहते हैं।

–आर्योद्देश्यरत्नमाला
48–49 50–51

****

गुजरात के बाद अब बसई गुरुग्राम, हरियाणा, में एक वर्ष तक निरन्तर चलने वाला अद्भुत "अग्निहोत्र प्रशिक्षण"

आर्य सुरेन्द्र सिंह तोमर, संयोजक, प्रबन्धक समिति, 'अग्निहोत्र प्रबन्धक समिति' आर्य समाज बसई, गुरुग्राम, हरियाणा से प्राप्त विज्ञप्ति के अनुसार सर्वकल्याण धर्मार्थ न्यास, पानीपत के तत्वावधान में एक वर्ष तक निरन्तर चलने वाला एक अद्भुत दिव्य "अग्निहोत्र प्रशिक्षण केन्द्र" का शुभारम्भ आर्य समाज बसई, गुरुग्राम में एक अक्तूबर 2017 से पूज्य आचार्य श्री ज्ञानेश्वर जी, रोजड़ (गुजरात) द्वारा होगा और इन्हीं के निर्देशन में वर्षभर लगातार चलता रहेगा।

इस कार्यक्रम की रूपरेखा पूज्य आचार्य ज्ञानेश्वर जी की अध्यक्षता में सम्पन एक बैठक में हुई जिसमें स्थानीय, हरियाणा राज्य के भिन्न–भिन्न जिलों से व अन्य स्थानों से लगभग 70 यज्ञ प्रेमी श्रद्धालु सम्मिलित हुए। आचार्य जी के उद्बोधन के बाद यज्ञप्रेमी सज्जन और भी उत्साहित हुए। पूज्य आचार्य जी ने उसी समय न्यास अध्यक्ष महात्मा वेदपाल आर्य को एक लाख रुपये प्रदान कर इस दिव्य यज्ञ में अपनी प्रथम आहुति दी। यह अद्भुत कार्यक्रम विश्व में गुजरात के बाद हरियाणा में दूसरा आयोजन होने जा रहा है।

महाराष्ट्र के गाँव गांधेली में पर्जन्यवृष्टि महायज्ञ संपन्न व वर्षाआरंभ

आर्यसमाज संभाजीनगर (औरंगाबाद) महाराष्ट्र तथा गांधेली ग्रामपंचायत के साथ प्रतिवर्षानुसार इस वर्ष भी पर्जन्यवृष्टि महायज्ञ का आयोजन किया गया जिससे मराठवाडा में खूब व्यापक वर्षा हो तथा किसान समृद्ध हों। आयोजन गंधमादन ऋषि की पावनभूमि गांधेली में किया गया। इस यज्ञ का ब्रह्मत्व डॉ. कमलनारायण जी आर्य रायपूर तथा मंत्रपाठ पं. विद्यानिधि शास्त्री ने किया। भजनोपदेश पं. सुरेन्द्रपाल जी नागपुर, पं. संदीप जी वैदिक मुजफ्फनगर ने किया।

ध्वजारोहण एवं ध्वजगीत हुआ। मंगल कलश की स्थापना के पश्चात् यज्ञ मंत्री तथा महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा के उपप्रधान व सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के उपमंत्री श्री दयानन्द राजाराम बसैये बंधु की उपस्थिति में प्रारंभ हुआ। 102 प्रकार की औषधियों की गाय के शुद्ध घी से आहुति प्रदान की जाती रही। प्रधान जुगलकिशोरजी दायमा, उपप्रधान सौ. सविता बलवंतराव जोशी, कोषाध्यक्ष अर्ड. जोगेन्द्र सिंह चौहान भी यजमान रहे। इन 6 दिनों में प्रतिदिन 140 दंपत्ती यजमान रहे।

बसैये गांव के पंचक्रोशी में से हजारों लोग की उपस्थिति से पूर्णाहुति हुई। इस यज्ञ में गांधेली ग्रामपंचायत ने लंगर का आयोजन किया तथा सायं में सांसद तथा शिवसेना उपनेता श्री. चंद्रकांत जी खैरे के हाथों पर्जन्यवृष्टि महायज्ञ के ध्वज का अवतरण करवाया।

इस गांव में 40 वर्ष के बाद यह पहली बार पर्जन्यवृष्टि महायज्ञ हुआ है। महाभारत के युद्ध के पूर्व में गंधमादन ऋषि ने अपने जीवन में 99 बार इस परिसर में यज्ञ किया था। सभी आये हुये विद्वानों को डॉ. धर्मेन्द्रजी शास्त्री, दिल्ली, लिखित 'अग्निहोत्र' ग्रंथ, ''सत्यार्थप्रकाश'' व 'प्यारा ऋषि दयानंद' चित्रावली सहीत सप्रेम भेट किया गया। शांतिपाठ व आभार से यज्ञ संपन्न हुआ है।

विश्व वेद सम्मेलन के संदर्भ में हुई विचार संगोष्ठी

डॉ. आनन्द कुमार संयोजक, विश्व वेद सम्मेलन में प्राप्त विज्ञप्ति के अनुसार गुरुकुल गौतम नगर नई दिल्ली में विश्व वेद सम्मेलन के संदर्भ में एक संगोष्ठी आयोजित की गई। इस बैठक में अभी तक सम्मेलन के सम्बन्ध में तैयारियों की समीक्षा की गई एवं यह निर्णय लिया गया कि यह सम्मेलन दिनाँक 15, 16, 17 दिसम्बर, 2017 को इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र, 1, जनपथ, (इण्डिया गेट के पास) नई दिल्ली में सम्पन्न होगा। इस वैदिक सम्मेलन में विद्वानों द्वारा शोध पत्रों के माध्यम से वैश्विक समाधान को प्रायोगिक एवं सैद्धांतिक दोनों प्रकार से प्रस्तुत किया जाएगा। इस दिशा में एक शोध पत्र चयन समिति का भी गठन किया गया जिसकी अध्यक्षत स्वामी प्रणवानन्द जी करेंगें।

बैठक में इस बात पर भी सहमति बनी कि सम्मेलन के माध्यम से विश्व के समक्ष वर्तमान चुनौतियों यथा–गरीबी, भुखमरी, बीमारी, अशिक्षा, जलवायु परिवर्तन, आर्थिक विषमता आदि समस्याओं का वेदसम्मत समाधान प्रस्तुत किया जाय तथा वेद के वैज्ञानिक पक्ष को उजागर किया जाए।

शारदा देवी छोटूसिंह आर्य चैरिटेबल ट्रस्ट की दशम् पुरस्कार योजना

एक विज्ञप्ति के अनुसार स्वतन्त्रता सेनानी स्व. श्री छोटूसिंह आर्य संस्थापक अध्यक्ष आर्य कन्या विद्यालय समिति अलवर एवं स्व. श्रीमती दिव्या आर्य धर्मपत्नी श्री प्रमोद आर्य की पंचम पुण्यतिथि पावन स्मृति में अलवर जिले की हैहय क्षत्रिय (स्वजातीय) मेधावी छात्र एवं छात्राओं के लिए ट्रस्ट की दशम् पुरस्कार योजना के अन्तर्गत माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान की सैकेण्डरी परीक्षा 2016–17 में 65 प्रतिशत से अधिक अंक प्राप्त करने वाले छात्र–छात्राएँ अपना आवेदन कर सकते हैं। इसी तरह सेन्ट्रल बोर्ड की सैकेंण्डरी कक्षा 10 परीक्षा में 71 प्रतिशत से अधिक अंक प्राप्त करने वाले छात्र एवं छात्राएँ अपना आवेदन कर सकते हैं। पात्र छात्र–छात्राएँ अपने परीक्षा फल की छायाप्रति व पत्र व्यवहार का पता एवं मोबाईल नम्बर शारदा देवी छोटूसिंह आर्य चैरिटेबल ट्रस्ट, आर्य भवन, 1 अशोक सर्कल, अलवर, राजस्थान के पते पर भिजवा सकते हैं। अधिक जानकारी के लिए ट्रस्ट के दूरभाष –0144–2337232 अथवा 9413304495 पर सम्पर्क किया जा सकता है।

☞ पृष्ठ 01 का शेष

बी.बी.के डी.ए.वी. अमृतसर...

परीक्षाओं में प्राप्त उच्च स्थानों पर प्रकाश डाला और छात्राओं को यज्ञ के माध्यम से अपनी वैदिक संस्कृति से जुड़े रहने, अनुशासन का पालन एवं कठिन परिश्रम करने के लिए प्रेरित किया।

डॉ. वी.पी. लखनपाल एवं ऐडवोकेट विपिन भसीन, सदस्य स्थानीय प्रबंधकर्त्री समिति, आर्य समाज के सदस्य श्री राकेश मेहरा, श्री इन्द्रपाल आर्य, श्री इन्द्रजीत ठकराल, श्री संदीप आहूजा, श्री रवि मोहन ने –'यज्ञ' में भाग लिया और उन्होंने महाविद्यालय के स्टॉफ और छात्राओं के कठिन परिश्रम की प्रशंसा की।

इस आयोजन में महाविद्यालय के शिक्षक वर्ग व गैर शिक्षक वर्ग एवं छात्राओं ने उत्साहपूर्वक सहभागिता दी और 'शान्तिपाठ' के साथ 'यज्ञ' सम्पन्न हुआ।

Registration No. R.N.I. 39/57
Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11 \6066\2015-17
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. **U(C)-103 \2015-17**
Posted at N.D.P.S.O. ON 26/27-07-2017

हंसराज महिला महाविद्यालय, जालन्धर में नए सत्र पर हुआ यज्ञ

हंसराज महिला महाविद्यालय, जालन्धर में नए सेशन 2017–18 के शुभारम्भ के अवसर पर यज्ञ का आयोजन किया गया। इस अवसर पर प्राचार्या प्रो. डॉ. श्रीमती अजय सरीन की अध्यक्षता में कॉलेज के टीचिंग, नॉन टीचिंग व सहायक स्टॉफ के सदस्यों ने हवन में भाग लिया। हवन में यजमान के तौर पर प्राचार्या डॉ. श्रीमती अजय सरीन, डॉ. ज्योति मित्तू, स्टॉफ सचिव श्रीमत नवरूप, सह स्टॉफ सचिव श्रीमती सलोनी शर्मा, नॉन टीचिंग स्टॉफ के सचिव श्री रवि कुमार व सहायक स्टॉफ से श्री कमलजीत उपस्थित थे। यज्ञ के पश्चात् प्राचार्या डॉ. सरीन ने अपने सम्बोधन में

डी.ए.वी. कॉलेज मैनेजिंग कमेटी के प्रधान डॉ. पूनम सूरी, पदमश्री की ओर से भेजी गई शुभकामनाएँ स्टॉफ सदस्यों को दीं। डॉ. पूनम सूरी, (पदम्श्री) प्रधान डी.ए.वी. कॉलेज मैनेजिंग कमेटी ने अपने शुभ संदेश में कहा कि एच.एम.वी. हर क्षेत्र में अग्रणी रहता है। ईश्वर से हमारी प्रार्थना है कि यह सफलता इसी प्रकार प्राप्त करता रहे तथा ईश्वर की कृपा बनी रहे। उन्होंने कहा कि हमें जीवन की चुनौतियों के लिए सदैव तैयार रहना चाहिए तथा अपना काम पूरी लगन, मेहनत व ईमानदारी से करना चाहिए। पूरे स्टॉफ सदस्यों की निष्ठा से ही यह संस्था 90 साल का सफर तय करके उत्तर भारत की सर्वश्रेष्ठ संस्था बनी है तथा हम इसे और आगे ले जाने का संकल्प लेते हैं। उन्होंने कहा कि जैसा व्यवहार की हम दूसरों से अपने लिए अपेक्षा करते है, वैसा ही व्यवहार हमें दूसरों के साथ करना चाहिए। मंच संचालन डॉ. ज्योति गोगिया ने किया। इस अवसर पर कॉलेज के डीन, स्टाफ सदस्य, व नॉन टीचिंग स्टॉफ सदस्य उपस्थित थे।

पूर्व लोकायुक्त की यज्ञशाला में मेधावी छात्र हुए पुरस्कृत

कुरूक्षेत्र जिले में लाडवा इद्री मार्ग पर स्थित जस्टिस प्रीतम पाल, पूर्व जज, पंजाब एव हरियाणा उच्च न्यायालय व पूर्व लोकायुक्त, हरियाणा की यज्ञशाला में 65वाँ चरित्र निर्माण शिविर व पुरस्कार वितरण समारोह आयोजित किया गया। चरित्र निर्माण शिविर हर महीने के पहले रविवार को आयोजित किया जाता है।

इस बार इलाके के होनहार टॉपर बच्चों को पुरस्कार देकर प्रोत्साहित किया गया। सोनीपत की एडिशनल सिविल जज (सीनियर डिविजन) डॉ. सुखदा प्रीतम व गोहाना के एस. डी. जे. एम. श्री मंगलेश चौबे ने बच्चों को सम्मानित

किया और उन्हें आगे बढ़ने की प्रेरणा दी। जस्टिस प्रीतम पाल ने बच्चों को संदेश दिया कि आलस्य व क्रोध को त्याग दें, यह सबसे बड़े दुश्मन है और तरक्की में बाधक है। इसके अलावा मुनि जी के प्रवचन हुए और भजनोपदेशक ने मधुर भजन सुनाये। ऋषि लंगर के पश्चात् कार्यक्रम का समापन हुआ। अब अगला शिविर अगस्त के पहले रविवार को जो कि 06–08–2017 को आयोजित किया जाएगा।

दयानन्द महाविद्यालय अजमेर में नव सत्र प्रारम्भ

दयानन्द महाविद्यालय, अजमेर में नव सत्र् का प्रारम्भ महाविद्यालय परिसर में वैदिक रीति से यज्ञ के साथ हुआ। प्राचार्य, डॉ. अनूप कुमार की अध्यक्षता में यज्ञ पारम्परिक श्रद्धा, उल्लास व समस्त विधि–विधानों से सम्पादित किया गया। महाविद्यालय में उपस्थित सभी व्याख्याताओं, कर्मचारियों एवं विद्यार्थियों ने यज्ञ में आहूतियाँ प्रदान की।

इस अवसर पर प्राचार्य, डॉ. अनूप कुमार ने सभी व्याख्याताओं एवं कर्मचारियों को आर्शीर्वाद दिया कहे और साथ ही यह आह्वान किया कि

महाविद्यालय परिवार सभी के सहयोग से प्रगति की ओर आगे बढ़ेगा। उन्होंने कहा कि महाविद्यालय आर्य समाज के नियमों के अनुसार डी.ए.वी. कॉलेज मैनेजिंग कमेटी के दिशा निर्देशन में अपनी स्थापना के 76वें वर्ष में छात्र व समाजोपयोगी योगदान के लिए कृत संकल्प है। उन्होंने आह्वान किया कि सभी अपने कार्य के प्रति सजगता एवं कर्मठता को दिखाएं, जिससे महाविद्यालय का चहुँमुखी विकास हो। प्राचार्या ने कहा हमारे जीवन में कर्म की प्रधानता होनी चाहिए, जिससे संस्था की और जीवन की उन्नति संभव हो सके।

इस अवसर पर श्रीमुमुक्षमुनि ने सभी को मीठी व भद्रवाणी बोलने एवं सुनने के लिए तथा सत्य वचन बोलने के लिए प्रेरित किया। वैदिक मंत्रोच्चारण से महाविद्यालय प्रांगण गुंजित हो उठा। प्रथम दिन ही महाविद्यालय छात्र–छात्राओं के आगमन से सरस हो गया।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**